॥ ओ३म् ॥

प्रभु से विनय

प्रभु! मेरा जो क्रियात्मक जीवन है, मैं उसे सदैव चाहता रहता हूँ कि मेरा जीवन इस संसार में कर्मठता को प्राप्त होता रहे। क्योंकि कर्मठता ही तो जीवन है, अकर्मण्यता ही मृत्यु है, जिसे हमें जानना है। हम सदैव अपने जीवन में विचार-विनिमय करते रहते हैं। हे भगवन्! तू वास्तव में विचारकों का भी विचारक है, सदैव अखण्ड रहने वाला है, तेरा संसार में कोई विभाजन भी नहीं कर पाता, तू इतना महान् है और विभु माना गया है जो सर्वत्र ओत-प्रोत है। मैं आपके चरणों की वन्दना करने आ रहा हूँ, प्रभु! यह जो अन्तरिक्ष है यह आपका मस्तिष्क ही है, प्रभु! ये जो दिशाएँ हैं यही तो आपकी भुजाएँ हैं, यह पृथ्वी ही तो आपके तालू का कार्य कर रही है, भगवन्! आप जो पृथ्वी पर विचरने वाले नदीवत् हैं, यह आपके नाना स्त्रोत हैं, आपके शरीर के स्त्रोत हैं, पर्वत अस्थियों का कार्य करते रहते हैं। भगवन्! यह जो सारा जगत है यह एक ब्रह्म के स्वरूप में मुझे दृष्टिपात आ रहा है।

प्रभु! यह जो संसार मुझे दृष्टिपात आ रहा है यह क्या है? इसको मैं जान नहीं पाता, जहाँ केवल अपने ही मानववत को नष्ट किया जाता हो। प्रभु! मुझे यह जगत सुन्दर प्रतीत नहीं होता, मुझे तो केवल एक ब्रह्म ही प्रतीत होता है, जिसका यह विराट ब्रह्माण्ड एक शरीरवत् प्रतीत होता है।

पूज्यपाद-गुरुदेव

अंक : 582 कुल पृष्ठ संख्या समग्र अंक : 657
वर्ष : 50 44 समग्र वर्ष : 56

अनुक्रम

क्रम संख्या	विषय	पृष्ठ संख्या
1. प्रभु से विनय	पूज्यपाद-गुरुदेव	3
2. अनुक्रम		4
3. महर्षि शाकल्य मुनि (तप व ममता)	पूज्यपाद-गुरुदेव	5-21
4. महात्मा जड़भरत (पुनः आगमन)	पूज्यपाद-गुरुदेव	22-37
5. ऋषियों के उद्‌गार		38
6. दान, पुस्तकों की सूची व पुस्तक प्राप्ति के स्थान तथा सूचना इत्यादि		39-42

नम्र-निवेदन

पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज ने अपने प्रवचनों में वेद मन्त्रों का गान करते हुए उनकी प्रचलित भाषा में व्याख्या की है। उसी अमृत वाणी को जनकल्याण के लिए ''सँहिता'' रूप में प्रकाशित करने के लिए वैदिक अनुसन्धान समिति सभी श्रद्धालु एवम् दानदाताओं से सहयोग के लिए आह्वान करती है जिससे कि प्रकाशन का कार्य सुचारू रूप से ऊर्ध्वा गति को निरन्तर प्राप्त होता रहे। सहयोग की राशि समिति के बैंक खाते में स्वेच्छानुसार भेजने के लिए बैंक का विवरण निम्न प्रकार से है–

वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.) PAN No. – AAAAV7866J
पंजाब नैशनल बैंक, खान मार्केट, नई दिल्ली
बैंक खाता नं. 0149000100229389, IFS Code - PUNB 0014900

शृङ्गीऋषि वेबसाईट

Website : www.shringirishi.in
Email : contact@shringirishi.in

आप सभी को दशहरा व दीपावली की हार्दिक शुभकामनाएँ।

॥ ओ३म् ॥

महर्षि शाकल्य मुनि
(तप व ममता)

जीते रहो!

देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेद मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही उस मनोहर वेद वाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेद वाणी में उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि वह परमपिता परमात्मा अनन्तमयी माने गये हैं और जितना भी यह जड़-जगत अथवा चेतन्य-जगत हमें दृष्टिपात आ रहा है उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में प्रायः वे परमपिता परमात्मा दृष्टिपात आते रहते हैं। क्योंकि वह अनन्तमयी हैं और उसका ज्ञान और विज्ञान भी अनन्तमयी माना गया है। तो आज का हमारा वेद मन्त्र यह उद्गीत गा रहा है कि हम परमपिता परमात्मा की महती और उसकी अनन्तता के ऊपर सदैव विचार विनिमय करते रहें।

मानवीय-जीवन

मेरे प्यारे! आज का हमारा वेद मन्त्र यह उद्गीत गा रहा है **'अमृताम् दिव्याम् गतम् ब्रह्मणा व्रतम् देवाः'** वेद का मन्त्र यह कहता है कि मानव यदि तू अपनी साधना में परणित होना चाहता है, अपने में गमन करना चाहता है तो तेरा मानवीयत्व सदैव पवित्रता में रत्त रहना चाहिए जिसके ऊपर मानव परम्परागतों से अन्वेषण करता रहा है और अनुसन्धान करता रहा है। क्योंकि उसका कोई भी ऐसा क्रियाकलाप नहीं है जिस क्रियाकलाप में हम उस परमपिता परमात्मा की महती का वर्णन न कर सकें। तो हमारा जीवन उस महान् देव की आभा में सदैव रत्त रहे। क्योंकि वह परमपिता परमात्मा अनन्तमयी हैं और उसका ज्ञान और विज्ञान भी अनन्तमयी माना

गया है, जिस अनन्तता के ऊपर परम्परागतों से ही मानव अपने में अन्वेषण करता रहा है। क्योंकि प्रत्येक मानव की यह प्रवृत्ति बनी रहती है कि हम अपने में अन्वेषण करें चाहे वह मानवीय जीवन हो, चाहे वह इस ब्रह्माण्ड की आभा हो। वह सर्वत्रता में यह चाहता है कि प्रत्येक वस्तु को हम जानने वाले बने। जब हम परमपिता परमात्मा की महती को अपने में धारण कर लेते हैं तो यह संसार हमारे लिए और यह ब्रह्माण्ड हमारे अन्तःकरण में प्रवेश होने लगता है। क्योंकि वह परमपिता परमात्मा की महती है और उसी की अनन्तता में मानव सदैव तत्पर रहा है। तो आओ मेरे पुत्रो! मैं इस सम्बन्ध में कोई विवेचना नहीं देना चाहता। विचार केवल यह कि यहाँ परमपिता परमात्मा का दिया हुआ जो अनन्तमयी ज्ञान और विज्ञान है उसके ऊपर हमारा अन्वेषण होना चाहिए अथवा उसी में हमें रत्त रहना चाहिए जिससे मानवीय जीवन एक महानता में गमन करता रहे और अनन्तमयी धाराओं के ऊपर विचार विनिमय होता रहे।

उग्रवाद व ममता

आओ, मेरे पुत्रो! आज का हमारा वेद मन्त्र कुछ कह रहा है। वेद में आज एक मन्त्र आया है **"वस्वनम् बृही कृणस्वताम् वरुण स्वतः प्रवाः उग्रो संजनम् ब्रवाहः"** वेद का वाक्य यह कहता है कि हे मानव, तू उग्र मत बन क्योंकि उग्रवाद जितना भी है वह मानव की अन्तरात्मा की प्रतिभा को विनाशता के मार्ग पर ले जाता है। तो इसलिए वेद का वाक्य कहता है, **'उग्रो संजनम ब्रव्हे'** हे मानव, तू उग्र क्रिया को प्राप्त न हो क्योंकि जितनी भी उग्र क्रिया है वह चाहे किसी भी क्षेत्र में हो, चाहे वह क्रोधाग्नि के रूप में हो, चाहे वह मानव अपने स्वार्थपरता के रूप में हो, चाहे वह मोह ममता में रत्त रहने वाली हो वह विशेषता के मार्ग पर ले जाती है। मैं आज किसी वस्तु का विरोधी नहीं हूँ। **वेद में, दर्शनों में, वेद मन्त्रों में किसी भी वस्तु का विरोध नहीं आता है** परन्तु जब वह सीमा से उपरान्त हो जाती है तो उसके पश्चात् मानो उसमें विरोधाभास हो जाता है और वही देखो

मानव के लिए हानिप्रद होती है। इसलिए हमारा वेद का मन्त्र कहता है कि हे मानव, तू किसी भी क्षेत्र में उग्र मत बन क्योंकि उग्रवाद आने के पश्चात् मानवीयता नष्ट हो जाती है, आत्मा की जो मानवीय तरङ्गें हैं उसका विनाश हो जाता है और साधना का क्षेत्र भी नष्ट हो जाता है।

मुनिवरो! देखो, मुझे ऐसा प्रतीत होता रहता है कि आदि ऋषियों की बेटा! सभाएँ हुआ करतीं। मुझे स्मरण आता रहता है कि एक समय बेटा! महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज के यहाँ एक सभा उपस्थित हुई। जिसमें देखो कुछ ब्रह्मचारी उपस्थित थे मानो ब्रह्मवेत्ता भी थे और जो ब्रह्मनिष्ठ भी कहलाते थे। तो बेटा! वे सब एक दूसरे की चर्चा को श्रवण कर रहे थे। उसमें यह प्रसंग आया कि संसार में उग्रवाद किसे कहते हैं? तो देखो महर्षि शाकल्य मुनि महाराज की वार्त्ताओं को वह वर्णित करने लगे। परन्तु महर्षि रोगू ऋषि ने यह कहा कि भगवन्! मेरे विचार में तो यह आता है कि जितना भी क्रियाकलाप है, मानव में जब अहम् भावना प्रबल हो जाती है, जब वह अहम् भावना प्रबलता को प्राप्त होती है तो वही अहम् भावना मानव के विनाश का मूल बन जाती है। और यदि वह सीमा में रहती है, अपने स्वाभिमान में रहती है और अपने में मानो अपनेपन का गुणगान गाने लगती है तो वही मानो उसके लिये हितकर है, वही मानव के स्वाभिमान को स्थिरता में धारण करने वाला है। परन्तु 'अमृतम ब्रह्मे कृतम' यदि वह देखो उग्रता में है जैसे काम्यतः उसमें ममता है; जब ममता भी चरम सीमा में चली जाती है तो वही ममता विनाश के मार्ग पर ले जाती है। तो विचार आता रहता है कि ममता करनी चाहिये क्योंकि बिना ममत्व के पालना नहीं हो पाती है परन्तु जब वही ममत्व सीमा से दूरी हो जाती है तो वही ममत्व मानव के जीवन की प्रतिभा को नष्ट कर देती है।

मुनिवरो! देखो, मुझे कई वार्त्तायें स्मरण आने लगती हैं। मैंने तुम्हें कई काल में वर्णन करते हुए कहा था कि कोई भी मानव जो अपने स्वाभिमान को जागरूक करता है और उसका स्वाभिमान यदि विशिष्टता के लिए और

अपने अभिमान के लिए परणित हो जाता है अपनी ममता के लिए तो वही स्वाभिमान देखो उसके आत्मबल को नष्ट करने लगता है। इसी प्रकार विचार आता रहता है कि माता अपने बाल्य का ममता में पालन कर रही है और वह अपने में यह विचार रही है कि मेरा बाल्य पवित्र बन जाए, मेरा बाल्य मानो महान् बन जाए और बाल्य में मानो सर्वत्र गुणों की स्थापना हो जाए। यदि इस प्रकार माता जब ममता में परणित हो करके उसे नाना प्रकार की शिक्षाओं में परणित कर देती है तो वही उसकी जो ममता है उसके लिए मानो एक विचित्र मार्ग बना देती है, वही माता को माता बना देती है। परन्तु देखो यदि माता, वही माता उस बाल्य को शिक्षा नहीं दे पाती और वह मानो अप्रियता की शिक्षा उसे प्रदान करने लगती है और उसे देखो मानव से अमानव में ले जाती है, वह मानव अपने में दुष्कर्मी बन जाता है। तो माता की वही जो अति ममता है वही मानो माता के लिए हानिप्रद हो जाती है। इसी प्रकार प्रत्येक मानव को यह विचारना है कि हम अपने में देखो सीमा से दूरी न चले जायें। हम इनको मानो प्रत्येक दशा में ऊर्ध्वा में गमन करते रहें।

मेरे पुत्रो! देखो, यहाँ और भी नाना ऋषियों के प्रसंग आये। उन्होंने कहा क्रोधाग्नि और ममत्व और देखो यह जो मोह की ममता है, जो मोह है यह भी होना चाहिये। परन्तु यह सीमा से बाह्य नहीं होना चाहिये। मोह किसे कहते हैं? मोह मानो एक ऐसी वस्तु है जो मानव को मोक्ष के द्वार से भी संसार में ले आती है। देखो, जब मोह अति हो जाता है तो मानव की मृत्यु हो जाती है। वह मानव की मृत्यु किसे कहते हैं? बेटा! वह उसी आभा में समाप्त हो जाता है, उसी को प्राप्त करता रहता है।

महर्षि शाकल्य मुनि महाराज का चिन्तन

आओ, मेरे प्यारे! आज मुझे एक वाक्य स्मरण आ रहा है। मैंने बहुत पुरातन काल में इन वाक्यों का तुम्हें निर्णय भी दिया। आज भी मुझे स्मरण आ रहा है। मेरे पुत्रो! देखो एक महर्षि शाकल्य मुनि हुए हैं और महर्षि शाकल्य मुनि महाराज का जीवन बड़ा अद्वितीय था। भयँकर वनों में उनका

वास था। और उन्हें लगभग देखो **दो सौ वर्ष हो गए थे साधना और तपस्या में रत्त हुए।** उनकी साधना बड़ी विचित्र चल रही थी। और वह देखो सब द्वारों से पार हो गए थे, मोह ममता इत्यादियों से भी। देखो, एक समय अपने आसन पर वह विद्यमान थे और वह देखो, अपने को यह स्वीकार कर रहे थे कि मैं अब मोक्ष के द्वार पर चला गया हूँ। और मोक्ष के द्वार पर, द्वार के लिए जाने के लिए मैं तत्पर हो रहा हूँ। देखो, वह यही चिन्तन कर रहे थे कि मैं प्रभु के राष्ट्र में आ गया हूँ और प्रभु के राष्ट्र में जाने से ही महानता महान् प्रबलता को प्राप्त होती रहेगी और मेरा आत्मीय जो ज्ञान है वह पवित्रता में परणित हो जायेगा। देखो, जब ऋषि ने अपने मन में यह स्वीकार कर लिया कि मैं मोक्ष के निकट चला गया हूँ और वह प्रभु के राष्ट्र में अपने को स्वीकार कर रहे थे। तो बेटा! विचार-विनियम होता, नाना ऋषिवर आते और वह ऋषि मुनि देखो ज्ञान और विज्ञान की, आत्मा की चर्चा करते रहते थे।

बेटा! एक समय आत्मा की चर्चा करते हुए महर्षि शाकल्य मुनि नाना ब्रह्मचारी और जिज्ञासुओं से यह उच्चारण करने लगे कि यह जो आत्मा का अनुपम विषय है यह बड़ा विचित्र है। देखो, केवल आत्मा ही मानो प्रकाश में रत्त रहने वाला है। और आत्मा ज्ञान और प्रयत्न के माध्यम से ही रमण करता रहता है। मानो यह जो **आत्मा है इसका जो मौलिक गुण है, वह ज्ञान और प्रयत्न कहलाता है।**

ज्ञान का स्वरूप

ज्ञान कहते हैं संसार की मौलिक वस्तुओं का ज्ञान होना, ज्ञान और विज्ञान में रत्त रहना। ज्ञान उसे कहते हैं देखो, प्रभु का दिया हुआ जो अनुपम ज्ञान है, प्रत्येक मानव उस परमपिता परमात्मा का सूत्र बना रहता है और जो उस सूत्र की माला को अपने में धारण करने लगता है वह ज्ञान में रमण करने लगता है, क्योंकि उसी माला का नाम ज्ञान है। जैसे हमारे यहाँ वेदों में तीन विषय आते हैं ज्ञान, कर्म और उपासना। मानो ज्ञान उसे कहते

हैं 'ज्ञानाति जन्ननमं ब्रहे' जो प्रत्येक वस्तु को जान लेता है। जैसे देखो हम अग्नि को जानना चाहते हैं तो अग्नि का जो गुण है वह तेजोमयी है। और अपने तेज से देखो, अग्नि के तेज से दोनों की तुलना करने लगता है। तो जब सन्तुलित हो जाता है, तो अग्नि को जानना ही मानो अपनी अग्नि से समावेश करने का नाम ज्ञान है। मुनिवरो! देखो 'ज्ञानाम् ब्रह्मे' जैसे हम सूर्य के ज्ञान में जाना चाहते हैं। वह सूर्य का जो प्रकाश है वही उसका ज्ञान है। मानो जो उसमें ऊर्जा है वही उसका ज्ञान है। और वह ऊर्जा क्या-क्या क्रियाकलाप करती है इस संसार में, तो देखो यह उसका ज्ञान कहलाता है। तो वह जो ज्ञान है वही देखो 'जानाति जन्नम् ब्रह्म कृतम' जो जान लेता है वह ज्ञानी बन जाता है। मेरे पुत्रो! ऊर्जा में जब यह गमन करता है कि यह जो ऊर्जा का ज्ञान, कि यह जो ऊर्जा गमन कर रही है इसका मूल क्या है, हम इससे क्या-क्या क्रियाकलाप कर सकते हैं। तो बेटा! भौतिक विज्ञान में पहुँचो, उसके पश्चात् आध्यात्मिकवाद में रमण कर जाओ। जब भौतिक विज्ञान में यह जान लेता है कि यह जो सूर्य की ऊर्जा है उसके साथ मेरा यन्त्र गमन कर सकता है। मेरे प्यारे! यन्त्र को गमन कराता रहता है। इसी प्रकार जब वह आध्यात्मिकवाद में प्रवेश होता है तो आध्यात्मिकवाद में योगी सूर्य की किरणों के साथ कुम्भक प्राण को जान कर देखो प्राण का कुम्भक करता हुआ अपान और उदान के द्वारा उसे जानते हुए देखो सूर्य की किरणों के साथ वह सूर्य मण्डल में प्रवेश हो जाता है। तो मानो यह उसको ज्ञान कहते हैं। वह "जानाति जन्ननम् ब्रह्मेः कृतम" मानो जो इसको जानता है वह ज्ञान कहलाता है। तो मेरे पुत्रो! यह जितना भी संसार है यह चाहे व्यवहार में हो, चाहे वह देखो परोक्ष में हो, चाहे अपरोक्ष में हो इस सर्वत्र ज्ञान को अपने में जान लेना ही ज्ञान कहलाता है।

प्रयत्न की विवेचना

मेरे प्यारे! प्रयत्न किसे कहते हैं? प्रयत्न उसे कहा जाता है जो मानव देखो दृष्टिपात करके उसकी गति में मानो अन्तर्द्वन्द्व आ जाए। अगर गति

में जब परिवर्तन हो जाता है तो उसी गति के साथ देखो उसका प्रयत्न बन जाता है। वह अपने प्राणों की रक्षा करता है और प्राणों की रक्षा करना ही बहुत अनिवार्य कहलाया है। वह उसका प्रयत्न बन जाता है। तो देखो प्रयत्न की और भी विचित्र विवेचना करते हुए ऋषि मुनियों ने यह कहा है, और वेद का मन्त्र यह कहता है कि हम मानो प्रयत्न कर रहे हैं। हम संसार में अपने उपार्जन का भी प्रयत्न करते हैं मानो वैज्ञानिक यन्त्रों के द्वारा नाना प्रकार के परमाणुओं का मिलान करते हैं, वह भी प्रयत्न कहलाता है। देखो **मानव जितना भी पुरुषार्थ करता है वह प्रयत्न कहलाता है।** प्रयत्न की विवेचना करते हुए ऋषियों ने कहा है कि इस पृथ्वी से नाना प्रकार की ऊर्जा तत्त्वों को मानो उन्हें उपार्जन करने का नाम भी देखो प्रयत्न कहा जाता है और वह **प्रयत्न ज्ञान के माध्यम से उत्पन्न होता है।** जैसे किसी वस्तु का जब ज्ञान होता है तो उसके पश्चात् प्रयत्न करता है। जैसे एक मानव सूर्य मण्डल में जाना चाहता है और उसने यह जान लिया है कि तू सूर्य की किरणों के साथ गमन कर सकता है। तो उसी समय वह प्रयत्न करता है और प्रयत्न क्या करता है कि प्राण को अपान में मिलता है और अपान को समान में और समान को व्यान में प्रवेश करता हुआ उदान में प्रविष्ट कर देता है। तो प्राणों की जहाँ एक सूत्रता बनी तो उसी समय ज्ञान के ही द्वारा वह प्रयत्न करता है कि मैं योगेश्वर बन जाऊँ, मैं प्राण और अपान को जानने लगूँ। और सूर्य की किरणों में कौन सा प्राण गमन कर रहा है। उससे वह अपने में प्रयत्नशील हो करके और वह ज्ञान और प्रयत्न दोनों के स्वरूप में रमण करता हुआ देखो वह सूर्य मण्डल की यात्रा करने लगता है। और भी नाना प्रकार के लोकों की यात्रा करने लगता है। तो विचार आता रहता है कि आत्मा के दोनों ही मौलिक गुण कहलाते हैं— ज्ञान और प्रयत्न।

देखो, विचार आता रहता है कि 'ज्ञानम् ब्रह्मे' जब मानव के परमाणुओं को सुन्न कर दिया जाता है तो वह प्रयत्न कहाँ गमन करता है, किसके गर्भ में चला जाता है। तो विचार आया कि बेटा! वह जो 'सुन्नाम् भूतम ब्रह्मे'

वह मानो आत्मा का जो प्रयत्न है उसके गर्भ से चला गया और वह जिसके माध्यम से वह प्रयत्न करना चाहता है वह प्राण के माध्यम से ही तो गमन करना चाहता है। वह प्राण की क्रिया सुन्न हो जाती है परन्तु वह जो उसका मौलिक गुण है वह नष्ट नहीं होता। वह उसके गर्भ में चला जाता है क्योंकि जब मानव का साथी नहीं रहता है, जिस मानव का जिस यन्त्र से वह क्रिया में लाना चाहता है जब वह नहीं रहता तो उसका जो मौलिक गुण है वह उसी के गर्भ में प्रवेश कर जाता है। तो मेरे प्यारे! देखो, मैं दूरी नहीं ले जा रहा हूँ इन वाक्यों को। केवल विचार-विनियम क्या कि **मानव को ज्ञान और प्रयत्न की आभा में रत्त रहना चाहिए।** आज बेटा! मैं अपने विचारों को बहुत दूरी ले गया हूँ। विचार यह चल रहा है, विचार यह प्रारम्भ हो रहा है कि जब महर्षि शाकल्य ने यह वाक्य कहा कि **मानव को ज्ञान और प्रयत्न को, दोनों को एक-दूसरे में समावेश करना है और वह समावेश ही मानव को मोक्ष के द्वार पर ले जा रहा है।** तो मुनिवरो! देखो शाकल्य मुनि महाराज जिज्ञासुओं से इस प्रकार की चर्चायें करते रहते थे। बेटा! महर्षि शाकल्य मुनि ने एक समय यह चर्चायें कीं कि ज्ञान और प्रयत्न को ही जानना है अथवा उसको जान करके ही हम अग्रणीय बन सकते हैं।

महात्मा शाकल्य मुनि की मोह ममता पुनः से जागरूक

मेरे पुत्रो! देखो महात्मा शाकल्य मुनि महाराज को दो सौ पचासी वर्ष हो गए थे इस प्रकार का अध्ययन करते-करते। वह चित्त के मण्डल को भी कुछ जान गए थे और वह मोक्ष के निकट जाना चाहते थे। उसके द्वार पर चले गये। एक समय बेटा! देखो कोई जिज्ञासु नहीं था, वह जिज्ञासु सब अपनी स्थली पर चले गए तो महर्षि शाकल्य मुनि महाराज अपने आसान पर विद्यमान थे और वे चिन्तन कर रहे थे कि इतने में ही एक हिरणी जो अपने गर्भ में मानो पूर्णता को प्राप्त हो रही थी। मेरे पुत्रो! देखो जब वह 'अमृताम ब्रह्मे' उस हिरणी को देखो दमन करना चाहते थे अथवा उसको नष्ट करना चाहते थे। जो जिह्वा के स्वाद होते हैं, जो मानो स्वादन करने

वाले होते हैं, उन्हें विवेक नहीं हो पाता और विवेक न होने से ही देखो उनका अन्तरात्मा मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। जो **अन्तरात्मा की वार्त्ता को स्वीकार नहीं करता वही तो मृत्यु कहलाती है।** तो देखो उन्होंने हिरणी पर शस्त्रों से प्रहार किया और शाकल्य मुनि आश्रम के निकट ही उसका गर्भाशय विच्छेद हो गया और वह हिरणी अपने आसन को 'भय अमृतों' को प्राप्त होकर वह अग्रणीय बन गयी और वह जरायु ऋषि के आश्रम में देखो प्रवेश हो गया। जब ऋषि ने दृष्टिपात किया कि यह क्या है तो उन्होंने जाना कि जरायु अपने में श्वास की गतियों में रमण कर रहा है। ऋषि ने जल लेकर के उसे अर्पित किया और प्राण शक्ति को वह प्राप्त हो गयी और वह ऋषि के आश्रम में ही पनपने लगा। महर्षि शाकल्य मुनि महाराज उसे जल का पान कराते और अन्य पदार्थों का आहार कराते। तो वह देखो प्रबल हो गया और ऋषि को देखो ममता, जिसको वह त्याग गए थे, वह ममता पुनः से जो आत्मा के मानव स्वरूप में गमन कर रही थी मन के और प्रकृति के मण्डल में वह मोह पुनः से जागरूक हो उठा। और वह जब जागरूक हो गया तो हिरणी के बाल्य से वह मोह ममता में रत्त हो गए। जब मोह ममता में रत्त हो गए तो इतनी ममता जागरूक हो गयी कि वह पुनः भोज्य उसे पान कराते उसके पश्चात् खुद, स्वयं भोज्य करते। तो ऋषि इतनी ममता में परणित हो गए। अपनी आयु पर आकार के वह हिरणी का बाल्य समाप्त हो गया। जब समाप्त हो गया तो ऋषि के अन्तर्हृदय में दुखद हुआ। और वह ममता इतनी जागरूक हो गयी कि उन्हें हिरणी के बाल्य के द्वितीय कोई दृष्टिपात नहीं आ रहा था। उसी की दाह में वह रत्त रहते।

महर्षि सोमकेतु का उपदेश

मेरे प्यारे! जब उनके माता पिता को, उनके सहपाठियों और ऋषि मुनियों को यह ज्ञान हुआ कि महर्षि तो ममता में रत्त हो गए हैं तो एक समय भ्रमण करते हुए महर्षि सोमकेतु उनके आश्रम पर पहुँचे क्योंकि विद्या अध्ययन की है। उन्होंने कहा भगवन्, इस मोह में क्यों आ गए हो? उन्होंने कहा

मोह ममता में मैं रत्त हो गया हूँ और यह जा नहीं पा रहा है। उन्होंने कहा प्रभु! देखो ममता तो होनी ही नहीं चाहिए क्योंकि यह ममता तो मानव के अन्तःकरण को विनाश करने वाली है। आप किस आभा में चले गए, आपको तो कर्त्तव्य का पालन करना चाहिये। वे ऋषि को उपदेश देने लगे, आत्मा के ज्ञान की प्रतिभा उन्हें स्मरण कराने लगे और वे यह बोले कि आत्मा का तो यह लक्षण ही नहीं है। **आत्मा का लक्षण तो केवल ज्ञान और प्रयत्न है।** आप तो प्रयत्न कर रहे थे कि मैं इस संसार से देखो उपरान्त हो जाऊँ। यह भी तो एक प्रयत्न है जो आप कर रहे थे और यह आत्मा का एक मौलिक गुण है जिसको तुमने जान लिया है जिस संसार के एक-एक परमाणु को जान लिया है, उसमें इतनी ममता में रत्त हो गए हो। आपने प्रकृति के मण्डल को जाना है। यह प्रकृति का जो मण्डल है देखो यह जड़ है परन्तु यह परमात्मा के सानिध्य मात्र से नाना प्रकार की रचना में दृष्टिपात आता रहता है। यह परमात्मा को, जैसे मानव को सुपन बनाता है और यह सुपन क्या है? देखो, यह केवल मन और आत्मा के प्रकाश में जो रमण करता है वही तो सुपन को प्राप्त होता है। इसी प्रकार आत्मा के प्रकाश में ही मानो तुम ममता में परणित हो गये हो। तुम आत्मा के मौलिक प्रकाश को जानने का प्रयास करो, जो ज्ञान और प्रयन्त के माध्यम से रमण करने वाला है। एक मानव ने यह दृष्टिपात किया कि यह जो वायुमण्डल में यह जो सूर्य गमन कर रहा है या चन्द्रमा गमन कर रहा है और चन्द्रमा शीतल है। तो यह सब अपनी अनुभूति से उसने जान लिया परन्तु जब यह प्रयत्न करता है तो चन्द्रमा के चन्द्रमा स्वरूप को जानने के लिए तत्पर हो जाता है। वह आत्मा का मौलिक गुण है। परन्तु प्रकृति के तथ्यों को जानना ही तो प्रयत्न है। और देखो उस में प्रयत्न करना जहाँ से हम आये हैं जहाँ हमें जाना है; हमें जाना कहाँ है, कहीं जाना है लेकिन जाना आना है परन्तु देखो यही तो हमारा ज्ञान और प्रयत्न कहलाता है। ऋषि ने सोम्यकेतु मुनि महाराज ने जब इस प्रकार वर्णन किया तो शाकल्य के मन में यह विचार नहीं आ पा रहा था। उन्होंने कहा प्रभु! वाक्य तो आपका यथार्थ है परन्तु जो मेरे संस्कार पुनः से ममता के जागरूक हो गए हैं वह कैसे

नष्ट होंगे क्योंकि यह मेरा जीवन व्यर्थ बन गया है। महर्षि सोम्यकेतु ने बहुत सी वार्त्ता प्रकट कीं।

महर्षि वैशम्पायन और महात्मा शाकल्य मुनि का चिन्तन

मेरे प्यारे! देखो, एक समय भ्रमण करते हुए वहाँ कहीं से महर्षि वैशम्पायन भी आश्रम में पहुँच गये। उन्होंने कहा, कहो शाकल्य, मैंने तो आपका नामोकरण यह श्रवण किया है कि तुम मोक्ष के द्वार पर चले गए हो। इस संसार को जानते-जानते तुम कहाँ चले गए हो कि तुमने ममता को जाना, तुमने क्रोधाग्नि को जाना, तुमने ही मानो यह मोह की प्रवृत्ति को जाना है और जानते-जानते तुम कहाँ आ गए हो? किस क्षेत्र में प्रवेश कर गए हो? उन्होंने कहा, प्रभु! यह मेरा दुर्भाग्य है। मैं दुर्भागी हूँ, जानता हुआ अग्नि में प्रवेश हो गया हूँ भगवन्! हे प्रभु! यह भी मेरे लिए भयँकर अग्नि है जिसने इतनी ममता में मुझे परणित कर दिया है। मानो भगवन् जब मैं माता की लोरियो का पान करता था और माता के आङ्गन में किलकारियाँ करता था तो माता मुझे यह कहती थी कि हे बाल्य तुझे मोह नहीं करना है। मैं भी कर्त्तव्य का पालन कर रही हूँ, मैं मोह में परणित नहीं होना चाहूँगी क्योंकि मानव को कर्तव्यवाद में रत्त रहना चाहिए और देखो मोह से अपने को उपराम हो जाना चाहिए, उससे उदासीन हो जाना चाहिए। एक समय जब मैं प्रबल हो गया था तो माता ने मुझे प्राण की विद्या प्रदान करायी और मैं साधना में परणित रहता। एक समय मैंने कुम्भक प्राणायाम ऐसा किया जिससे दूसरों को यह दृष्टिपात आने लगा कि मैं मृतक हो गया। मैंने अपनी माता से यह परीक्षा ली कि माता इसमें क्या कहेंगी? कुम्भक और रेचक प्राणायाम दोनों का मिलान करते हुए, प्राण और अपान का समन्वय कराते हुए मैं समाधिष्ठ हो गया। और ऐसा दृष्टिपात होने लगा जनसमूह को कि इसकी मृत्यु हो गयी है। जब माता से यह कहा, हे माता, तेरा युवा बाल्य मानो मृत्यु को प्राप्त हो गया है और विद्या को अध्ययन करके यह आये थे, विद्यालय से उस समय माता ने जब यह दृष्टिपात किया और श्रवण किया तो माता ने कहा इसमें रूधन न

करो, यह व्याकुल होने का विषय नहीं है। यह तो मानो इसका 'योग आचरण ब्रह्मे' मानव के जन्म जन्मान्तरों के संस्कार हैं और उन संस्कारों के आधार पर ही मानव अपने भोगतव्यों की क्रियाओं में रत्त रहता है। इसी प्रकार यह बाल्य भी अपने भोग आचरणों में रत्त हो रहा है परन्तु देखो माता यह जानती थी कि यह मृतक नहीं हुआ है। यह मानो तेरी परीक्षा ले रहा है, क्योंकि मैंने कहा है कि मैं ममता में नहीं जाना चाहती थी। तो जब ऐसा उन्होंने अपने मन में पान किया तो माता ने कहा, हे बाल्य! तू मेरी परीक्षा ले रहा है। तो प्रभु! माता मानो इस प्रकार तरङ्गों को जानने वाली थी। जब मानव के शरीर से तरङ्गों का प्रादुर्भाव हो जाता है और उन तरङ्गों का तरङ्गों से जब मिलान होता है तो वह सब अच्छी प्रकार जान लेता है। इसका नाम ही तो ज्ञान कहलाता है। बेटा! ज्ञान की विवेचना बड़ी विचित्र मानी गयी है। एक-एक तरङ्ग हमें ज्ञानी बनाती है। एक-एक तरङ्ग की सुगन्धी हमें वही तरङ्गों में तरङ्गित हो करके वह हमें महापुरुष बना देती है। देखो शाकल्य मुनि ने कहा कि माता ने भी निर्णय कराया और यह उसी की देन थी जो मैं यहाँ तक चला आया। परन्तु मेरा कौन से जन्मों का संस्कार, कौन से चित्त में संस्कार ऐसे उदबुद्ध हो गये जो हिरणी के बाल्य से मुझे मोह हो गया।

मेरे प्यारे! महर्षि वैशम्पायन ने कहा कि इसको त्यागो। उन्होंने कहा ऋषिवर! अब यह नहीं त्यागी जाती क्योंकि अन्तःकरण में जो संस्कार अंकित हो गए हैं। उसके चयन के संस्कार अंकित हो गए हैं, इनसे मुझे पुनः से उसी दशा में जाना होगा जिस दशा में मेरी माता ने मुझे पवित्र शिक्षा देकर के निर्मोही बना दिया था। मैं मानो पुनः से मोही बन गया हूँ और वह संस्कार पुनः से मेरे अन्तःकरण में जागरूक हो गए हैं। देखो, महर्षि शाकल्य मुनि महाराज ने जब ऐसा कहा तो महर्षि वैशम्पायन ने भी पुनः से यह कहा हे ब्रह्मचारी! हे ऋषिवर! तुम तो ब्रह्मवर्चोसी कहलाते हो, ब्रह्मचर्य को तुम जानने वाले हो और जो ब्रह्मचर्य को जानने वाला है वह महान् कहलाता है। तो तुम इन वार्त्ताओं को त्यागने का प्रयास करो। महर्षि शाकल्य मुनि महाराज ने यह कहा कि मेरे पिता भी मुझे शिक्षा देते रहते हैं

क्योंकि मेरे पितर अमृत रहते हैं उनकी चार सौ पचासी वर्ष की आयु हो गई है और वे मेरे समीप आते रहे हैं और मुझे शिक्षा देते रहते हैं। हे भगवन्! मैं उन शिक्षाओं को स्वीकार तो कर रहा हूँ परन्तु मेरे अन्तःकरण में जो संस्कार अंकित हो रहे हैं और जब मुझे वे स्मरण आते हैं तो मैं उसी क्षेत्र में चला जाता हूँ। मोह एक ऐसा विचित्र, एक ऐसा नृत्य है जो मानव के अन्तःकरण में अंकित हो जाता है। जिस माता के अन्तःकरण में अंकित हो जाता है वह बाल्य की पालना में इतनी मोहित हो जाती है कि वह अपने को दूर नहीं कर पाती है। विचार आता रहता है कि महर्षि शाकल्य मुनि महाराज का यह निश्चय विचार बन गया कि 'मोहम् ब्रह्मे' देखो यह एक वृत है। **कर्त्तव्यवाद से दूरी होना ही मानव की प्रतिभा की प्रतिभा नष्ट हो जाती है।** इसलिए मेरी प्रतिभा नष्ट हो गयी है भगवन्। महर्षि वैशम्पायन ने अपने विचार देकर के वहाँ से गमन किया।

अन्तःकरण के संस्कार

मेरे पुत्रो! देखो, कुछ समय के पश्चात् यह चिन्तन होता रहा और इसी ममता, ममता के रूप में उन्होंने एक समय अपने शरीर को त्याग दिया। आत्मा अपने उन्हीं मोह के संस्कारों को लेकर चित्त के मण्डल में प्रवेश कर गए, शरीर को त्याग देने के पश्चात् वह शव रह गया। मुनिवरो! देखो, ऋषि मुनियों ने अमृता को जान करके कि शाकल्य मुनि महाराज का इस शरीर से विच्छेद हो गया है उस शव को अग्नि में दाह कर दिया। अग्नि में दाह करने के पश्चात् ऋषि-मुनि उस भूमि पर विद्यमान होकर विचारने लगे कि ऋषि का उद्धार कैसे होगा, कैसे कल्याण होगा? ऋषि मोक्ष के निकट चला गया था परन्तु पुनः से संसार में आ गया और देखो ऐसे अन्धकार में गया जो मोक्ष से भी नीचे की स्थली पर प्रवेश हो गया। ऋषि मुनि यह विचार विनिमय करते रहे कि एक विशीशग नाम के ब्रह्मचारी ने कहा कि भगवन्! मेरे विचार में तो यह आता है, मैं उनके चरणों को जब वन्दना करने आता तो वह अपने में यही कहा करते थे कि मैं मोक्ष को तो चला जाऊँगा परन्तु

देरी लगेगी। देखो मुझे एक जन्म, दो जन्म और लेने होंगे क्योंकि मेरे अन्तःकरण में देखो मेरे जन्मों का एक संस्कार बन गया है।

मेरे प्यारे! देखो, इसी प्रकार हमें ऐसे विचारों में जाना है जहाँ हमारे जीवन में मोह इतना प्रबल न हो जाए, उसी का नाम ही उग्र क्रिया कहलाता है। देखो उग्र क्रिया जीवन में नहीं आनी चाहिए। वेद मन्त्र कहता है कि हे मानव, यदि तू अपने जीवन को महान् बनाना चाहता है तो तेरे में उग्र क्रिया नहीं आनी चाहिए। अगर तेरे में उग्र क्रिया आती है तो तेरे जीवन का अस्तित्व समाप्त हो जाएगा। यदि क्रोधाग्नि जागरूक हो जाए तो तुम अपने स्वाभिमान का सामना करो परन्तु क्रोध से अपने अन्तःकरण में संस्कारों को जन्म न दो। यदि अन्तःकरण में संस्कार बनेंगे तो आवागमन का क्षेत्र बन जाएगा।

ऋषि कहता है कि क्रोधाग्नि नहीं आनी चाहिए इसमें देखो, नाग प्राण उद्बुद्ध हो करके हमारे शरीर का विष बना देता है। उसी से हमारे शरीर में नाना प्रकार के रोगों की उत्पत्ति हो जाएगी और रुग्ण हो करके हम जीवन में मृत्यु को प्राप्त होते रहेंगे। ऋषि ने कहा है कि देखो यह जो मानव का जीवन है इसमें शरीर को त्यागने का नाम मृत्यु नहीं कहलाता है। **मृत्यु उसे कहते हैं जो अशुद्ध संस्कारों को जन्म देता रहता है** और अन्तःकरण में वह जन्म अंकित, संस्कार अंकित होते रहते हैं और वह जन्म-जन्मांतरों में हमें भोगना होता है। मेरे प्यारे! देखो, क्रोधाग्नि के सम्बन्ध में, मोह के सम्बन्ध में बहुत से विचार हैं। बेटा! इन विचारों के लिए ऋषि मुनियों ने प्राणायाम किया है, प्राण और अपान को मिलाने का प्रयास किया है, उदान को समान में ले जाने का प्रयास किया है। मेरे पुत्रो! देखो, प्रभु के राष्ट्र को विचारा है और अपने को इसमें ले गए हैं। तो इसलिए विचार आता रहता है कि हम क्रोधाग्नि में, उग्र क्रिया में, परणित न हो जाएँ।

उग्र-क्रिया

बेटा! **हमारे यहाँ पाँच प्रकार की उग्र क्रिया होती है। बेटा! काम, क्रोध, मद, लोभ और मोह यह मानो पञ्चीकरण कहलाता है** जो

मानव को उग्र क्रिया में ले जाता है, ये पाँचों ही उग्र क्रिया कहलाती हैं। जब तक यह सीमा में हैं वही मानव का संसार है और इनका सीमा से पार होना ही मानो संसार से दुरिता को प्राप्त होना है। तो जैसे 'अमृता व्रत्ते देवत्वाम्' जैसे मानव को जब लोभ आता है तो जब लोभ इतना अति प्रबल हो जाता है और वह इतना प्रबल हो जाए कि दूसरे के द्रव्यों को ग्रहण करने की उग्र क्रिया उसमें आ जाये तो वही जानो कि इसकी आत्मा की तरङ्गों का विनाश होने जा रहा है और वह एक समय मानो अपने में अपनेपन को न जान करके वह संसार के नाटकीय क्षेत्र में प्रवेश हो जाता है। तो विचार आता रहता है कि ये पाँच प्रकार की उग्र क्रिया है। बेटा! आज मैं तुम्हें विशेषता में तो ले जाऊँगा नहीं, केवल विचार विनिमय यह कि देखो एक महर्षि शाकल्य मुनि की चर्चा हो रही थी। इतने समय देखो कितने ऋषि चले गए हैं जो देखो मोक्ष के निकट से आ गए हैं और वह संसार में प्रवेश हो गए हैं। इसलिए **अति का नाम ही उग्रता है और सामान्यता का नाम ही यह संसार कहलाता है।** इसमें आनन्दत्व को मानव प्राप्त होता है।

आत्मा का गर्भ में पुनः से आगमन और याचना

बेटा! महर्षि शाकल्य मुनि की चर्चाएँ—वह राजगृह में शकुन्तला माता के गर्भ में प्रवेश हो रहा है। उस आत्मा को यह ज्ञान है गर्भ में भी कि तू मानो मोक्ष के निकट से आया है और तू माता के गर्भ में पुनः प्रवेश हो गया है जहाँ देखो दाहवृहे आवरण भ्रमण कर रहे हैं। माता नाना प्रकार के तीखे पदार्थों को ग्रहण कर रही है। वही रुधिर की मानो उसी में स्नान हो रहा है, देखो, आपो उसी में प्रविष्ट हो रहा है और मैं मानो उस माता के नाटकीय गर्भ में प्रवेश कर गया हूँ। मैं यह चाहता था कि मेरे अन्तरात्मा की यह भावना थी कि मैं मोक्ष के निकट चला जाऊँ, परमात्मा के क्षेत्र में चला जाऊँ, परमात्मा के गर्भ में प्रवेश हो जाऊँ। अरे देखो माता परमात्मा के गर्भ में तो मैं जा नहीं पाया परन्तु माता के गर्भ में पुनः से आ गया हूँ। इस प्रकार ऋषि अपने में प्रार्थना कर रहा है और यह कह रहा है, हे प्रभु!

मुझे इस संसार से उसी संसार में ले आ। प्रभु! मैं आगे जो जाऊँगा संसार में, तेरे क्षेत्र मे मोह नहीं करूँगा, मैं मोह नहीं करूँगा। प्रभु मुझे यहाँ से पृथक कीजिए। मेरी माता को मोह हो जाएगा जिसके गर्भ से मैं पृथक होऊँगा परन्तु मैं यह प्रतिज्ञाबद्ध हूँ आपके क्षेत्र में। यह सब आपका क्षेत्र है परन्तु इसमें आकर के मैं मोह नहीं करूँगा। ऐसी बेटा! वह याचना कर रहा था। मैं शेष चर्चा तो इसकी कल ही प्रकट करूँगा।

प्रकाश को प्रकाश में मिलाने की प्रेरणा

बेटा! आज का विचार तो केवल यह कि मानव को उग्र क्रिया में प्रवेश नहीं करना चाहिए। विचार कहता है 'उग्रो क्षमम् ब्रह्मा कृतम' कि यदि उग्रता लानी है तो तपस्या उग्रता लाओ जिससे तुम प्रभु के राष्ट्र को प्राप्त हो जाओ। अरे उग्रता लानी है तो यहाँ काम, क्रोध, मोह, लोभ को त्यागने की उग्रता को लाने का प्रयास करो और उसमें प्रयत्नशील बन जाओ और वही प्रयत्न मानो तुम्हें प्रभु के राष्ट्र में पहुँचा देगा। और वही तुम्हें प्रभु के राष्ट्र में प्रवेश करा देगा जहाँ अन्धकार नहीं रहता है, जहाँ प्रकाश ही प्रकाश रहता है। प्रकाश का प्रकाश जिसमें आत्मा प्रकाश में रत्त हो करके और प्रकृति से अपना विच्छेद कर लेती है और चेतना से अपना मिलन करके प्रभु को प्राप्त हो जाती है। आज मैं तुम्हें विशेष चर्चा में ले जाना नहीं चाहता, विचार-विनिमय क्या कि आज का वेद मन्त्र कहता है **'उग्रो क्षमम् ब्रह्माः कृतम मनस्तताः'** हे मानव, तू अपने में उग्र क्रिया को मत ला क्योंकि उग्र क्रिया तेरे विनाश का मूल है। बेटा! मैं शेष चर्चा तो तुम्हें कल ही प्रगट करूँगा। आज का विचार तो केवल यह कि हमें उग्र क्रियाओं को त्यागना चाहिए और सामान्यता में रहना चाहिए। और उग्र क्रिया लानी है तो परमात्मा के राष्ट्र में आकर के तुम साधना में प्रवेश हो जाओ, सूर्य की किरणों के साथ गमन करने लगो। जैसे यन्त्रवेत्ता यन्त्रों का निर्माण करता हुआ वह सूर्य की किरणों के साथ उसकी ऊर्जा में रमण करने वाला यान देखो सूर्य की परिक्रमा करता है। इसी प्रकार मानव को यदि उग्रता लानी है

तो सूर्य की किरणों के साथ तुम गमन करो, प्रकाश में प्रकाश को मिला दो जब तुम्हारे प्रकाश का प्रकाश में समन्वय हो जाएगा तो स्वतः अन्धकार तेरे से नष्ट हो जाएगा और तू प्रकाश में रत्त हो जाएगा।

यह है बेटा! आज का वाक्। आज के वाक्य उच्चारण करने का अभिप्राय यह है कि हमारा जीवन महान् बनना चाहिए जिससे प्रभु के राष्ट्र को हम दृष्टिपात करते रहें और अपने में उग्र क्रिया को त्याग करके और नम्रता से महानता के लिए हम प्रभु से सदैव प्रार्थना करते रहें। आज का विचार हमारा क्या कह रहा है कि हम परमपिता परमात्मा की महती और अनन्तता को जानने का प्रयास करें और उसकी अनन्तता में रमण करना चाहिए जिसकी अनन्तता को जान करके ही इस संसार सागर से हम पार हो जाएँ। यह है बेटा! आज का वाक्य, अब मुझे समय मिलेगा तो मैं शेष चर्चाएँ कल प्रकट करूँगा।

आज के वाक्य उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि हम परमपिता परमात्मा की महती को जानते रहें और **प्रत्येक मानव को अपने में महान् बनने के लिए सदैव तत्पर रहना चाहिए** और ज्ञान और विज्ञान में रत्त हो करके हम प्रभु के राष्ट्र को अपने में स्वीकार करें और हमारे जीवन में एक महान् क्रियाकलाप आ जाए। यह है बेटा! आज का वाक्। अब वेदों का पठन-पाठन।

वेद पाठ.....

महर्षि महानन्द जी — अच्छा भगवन्!
पूज्यपाद-गुरुदेव — आनन्दित रहो!

दिनाँक : 12 अप्रैल, 1990
समय : रात्रि 8.00 बजे
स्थान : श्री अजय शर्मा
एल.आई.सी. कालोनी,
शाहदरा, दिल्ली

॥ ओ३म् ॥

महात्मा जड़भरत

(पुनः आगमन)

जीते रहो!

देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने जिन वेद मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ मानव सदैव से ही वेदों का उद्‌गीत गाता रहता है और वह उद्‌गीत गाना ही हमारा कर्त्तव्य कहलाता है जिस उद्‌गीत गाने के लिए प्रत्येक मानव मानवीयता को धारण करता रहा है। तो इसलिए हम उस परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान को अपने में धारयामी बनाते रहें क्योंकि प्रत्येक **मानव का यह कर्त्तव्य बना हुआ है कि वह अपनी अन्तरात्मा के अनुकूल अपने विचारों को बनाता रहे और आत्मा की प्रेरणा को जो स्वीकार कर लेता है वह महान् और पवित्रतम् को प्राप्त हो जाता है।** तो आओ, मेरे पुत्रो! आज का हमारा वेद मन्त्र क्या कह रहा है? वह मन्त्र यह कहता है **'सर्वणं ब्रह्मणं ब्रह्वे कृतं देवाः अश्वतं ब्रह्व कृति वर्णास्वितः'** कि हम उस 'प्राणस्वरूप' को जानने के लिए सदैव तत्पर रहें। जिस प्राण की प्रतिभा से ही, मानवीयता मानो मानव वृत्तियों में रत्त होने लगता है। तो हम उस परमपिता परमात्मा का जो 'प्राणस्वरूप' है और जिसके नामो-करणों से उद्‌गीत गाया जाता है, उस परमपिता परमात्मा को हम रुद्र के नाम से वर्णन करते हैं। परन्तु वैदिक साहित्य में जहाँ रुद्र नाम परमपिता परमात्मा को कहा जाता है वहाँ रुद्र नाम बेटा! प्राणों को भी कहा जाता है। **'प्राणं ब्रह्मे कृतं'** यह प्राण ही मानव को महानता की वेदी पर ले जाने के लिए सदैव तत्पर रहता है। आज बेटा! मैं तुम्हें प्राणों के क्षेत्र में नहीं ले जा रहा हूँ क्योंकि प्राणों का क्षेत्र बड़ा विशाल क्षेत्र माना गया है।

आज का हमारा वेद मन्त्र क्या कह रहा है? आज मैं तुम्हें यज्ञ क्षेत्र में ले जाना चाहता हूँ। आज के हमारे वैदिक मन्त्रों में कहीं यागों का वर्णन हो रहा था कहीं आध्यात्मिकवाद की चर्चा हो रही थी। हमारे यहाँ वैदिक साहित्य वालों ने नाना प्रकार के यागों का चयन किया है और साहित्यकारों ने वैदिकता में याग को अपने में धारयामी बनाया है। **याग एक ऐसा ऊध र्वा में क्रियाकलाप है जिस क्रियाकलाप में 'मानवअमृतं देवः' जाने के पश्चात् और शेष कोई क्रिया नहीं रह पाती।** हमें याग के विस्तृत रूपों को जानना चाहिए।

नाग-प्राण

मेरे पुत्रो! देखो, विचार विनिमय क्या कि वेद मन्त्र में कहीं प्राण की विवेचना आ रही थी, कहीं नाग-प्राण की चर्चा आ रही थी, कि नाग-प्राण इस मानव के शरीर में रहता है। वैदिक मन्त्र कहता है **"नागां भूखवृत्ति देवत्वं ब्रह्मः अश्वतां अमृतां अश्वतां अमृते वर्णस्वतं दिव्यब्रहे कृतं"** कि वह जो नाग-प्राण है, मानो जब वह विकृत हो जाता है तो मानव के शरीर में जो अमृत रहता है मानो उसका विष बना देता है। इसलिए मानव को इस प्राण को विकृत नहीं रहने देना चाहिए क्योंकि प्राण के ऊपर हमारा अन्वेषण होना चाहिए। और यदि नाग-प्राण में विकृतता रही है तो मानव की मानवीयता नष्ट हो जाती है और वह विकृतता आने से देखो विष बन जाता है और अमृत नष्ट हो जाता है। इसीलिए विषधर नहीं बनना चाहिए। हमें नाग-प्राण की शान्ति युक्त पूजा करनी चाहिए।

परमपिता परमात्मा का दिग्दर्शन

इसीलिए हम परमपिता परमात्मा की महती का वर्णन करते रहते हैं। क्योंकि **परमपिता परमात्मा नम्र हैं इसीलिए मानव को भी नम्र बन जाना चाहिए, परमपिता परमात्मा निरभिमानी हैं इसीलिए मानव को निरभिमानी बन जाना चाहिए, परमात्मा अकाय हैं इसीलिए काया का**

मानव को देखो, विशेष अपने में धारयामी नहीं बनना चाहिए। वे परमपिता परमात्मा ज्ञानी हैं और चेतना रत्त रहने वाले हैं इसलिए मानव को चेतना और ज्ञान में रत्त हो जाना चाहिए। वे परमपिता परमात्मा इस संसार को धारण किये रहते हैं इसीलिए प्रत्येक मानव को अपने जीवन की प्रतिक्रिया को अपने में धारण कर लेना चाहिए। वह परमपिता परमात्मा, विज्ञानवेत्ता हैं इसीलिए मानव को भी विज्ञानवेत्ता बनना चाहिए। मेरे पुत्रो! देखो, उस परमपिता परमात्मा की महती अथवा उसके ज्ञान और विज्ञान के ऊपर मैं तुम्हें अपने विचार व्यक्त करने नहीं आया हूँ। केवल तुम्हें यह विचार देने के लिए आया हूँ कि प्रत्येक मानव को उस परमपिता परमात्मा की महती को अपने में, चिन्तन में लाना चाहिए।

महर्षि शाकल्य मुनि महाराज

आओ, मेरे प्यारे! उसी वेद मन्त्र की 'प्रतिभा' में तुम्हें ले जा रहा हूँ जहाँ मानव को, अपने को कितना महान् बनाना है और महान् बना करके देखो, त्रुटियों में मानव कहीं का कहीं चला जाता है। विचार आता रहता है 'महातं ब्रह्मे', देखो, महर्षि शाकल्य मुनि की चर्चा हो रही थी। जहाँ वे महर्षित्व को प्राप्त हो गए थे बेटा! वहाँ मोह के कारण, ममता के कारण यह मानव कहीं का कहीं चला जाता है। इसीलिए हमारे यहाँ विचार आता रहता है **'ममत्वा ब्रह्मणे ममत्वाँ लोकाः ममत्वां धारयामि रुद्रो भागः'** वेद का वाक्य कहता है कि हमें अपने में ममत्व इतना ममता में परणित नहीं होना चाहिए। वह ममत्व अपनी सीमा में रहना चाहिए। जब भी ममत्व सीमा में रहता है मानो उसी काल में मानव अपने कल्याण के मार्ग को प्राप्त कर लेता है। तो इसीलिए हमारा आज का यह विचार क्या कह रहा है—मेरे पुत्रो! देखो, वह शाकल्य मुनि महाराज हिरणी के बाल्य मानो उसकी ममता के ममत्व का, उसके प्राणों का अन्तिम चरण समाप्त हो गया, शरीर को त्याग दिया और अपने-अपने अवयव, अवयवों में प्रवेश हो गए।

मन

मेरे प्यारे! देखो, आत्मा के साथ में जो चित्त का संस्कार होता है मानो जो मनस्तत्त्व और बुद्धित्व रह जाता है, **यह मनस्तत्त्व ही देखो चित्त का मण्डल कहलाता है।** जैसे प्रकृति का सबसे सूक्ष्म यदि कोई तन्तु है तो वह मनस्तत्त्व कहलाता है। बेटा! यह मन वास्तव में जड़ पदार्थ है परन्तु जब यह आत्मा के प्रकाश में गमन करता है तो यह मन मानो संसार को अपने में समाहित कर लेता है। यह मन ही मानो एक अङ्कुर से वृक्ष का निर्माण कर लेता है, एक अङ्कुर से ही मानो यह अपनी आभा को, विशेष आभा को त्याग करके यह अपने में परणित हो जाता है। तो देखो, आत्मा के प्रकाश में ही यह गमन करता रहता है। तो आओ बेटा! मैं तुम्हें मन के ऊपर विशेषता में नहीं ले जाऊँगा। केवल विचार-विनिमय यह कि मन को हमें जानना है। इस मन के कारण ही इतना मोह ममता में मानव परणित हो जाता है। कहीं वह मोक्ष के निकट चला गया है, उसके पश्चात् भी वह देखो मोक्ष से भी कई आवृत्तियों में निचली स्थलियों में प्राप्त हो जाता है। जब इन स्थलियों को प्राप्त कर लेता है, तो बेटा! यह अपने में शान्त हो जाता है। तो विचार आता रहता है बेटा! **आत्मा को ज्ञान है, आत्मा ज्ञान में परणित रहने वाला है।** जो जन्म-जन्मान्तरों में क्रियाकलाप हुए हैं, वह इन क्रियाकलापों को भी जागरूक करने के लिये तत्पर रहता है।

महर्षि शाकल्य मुनि की आत्मा का पुनः से आगमन

बेटा! इसी प्रकार मुझे स्मरण आता रहता है वह बाल्य भरत, वह महर्षि शाकल्य मुनि महाराज का आत्मा जब माता के गर्भस्थल में प्रवेश हो गया तो देवता तो उसकी रक्षा करते ही हैं। देखो, सूर्य ऊर्जा देता रहता है, अग्नि अपने स्वरूप में गमन करती रहती है, चन्द्रमा मानो अमृत में प्रवेश कर जाता है, वायु प्राणवर्धक है, यह प्राण को देने वाली गतिवान् बना देती है। परन्तु वह जो आत्मा का ज्ञान है और जो वह ममता के कारण उस स्थली पर आ पहुँचा तो देखो वह आत्मा गर्भ में ही परमपिता परमात्मा से

उद्गीत रूप में प्रार्थना कर रहा है कि प्रभु, आपने मुझे अपने क्षेत्र से तो दूरी कर दिया है। हे प्रभु! मैं, मोह नहीं करूँगा, मैं मोह से उपराम हो जाऊँगा। मेरा यह संकल्प बन गया है, मैंने यह संकल्प किया है। वह बाल्य यह प्रार्थना करता रहा, यह आत्मा अपने में मानो परमात्मा का उपासक बन करके वह तपस्या में परणित हो रहा है। वह जो नौ माह और नौ दिवस हुए तो माता के गर्भ से वह बाल्य पृथक हो गया। जब पृथक हो गया तो देखो माता की लोरियों का पान करने लगा परन्तु राजा को जब यह प्रतीत हुआ कि आज तो हमारे गृह में बाल्य का जन्म हुआ है तो बेटा! कहीं वेदों का उद्गीत गाया जा रहा है, कहीं याग हो रहे हैं, कहीं मानो दर्शनों की वार्त्ता हो रही है। राजा के राष्ट्र में एक आनन्दवत् छाने लगा तो राजा बड़े प्रसन्न हुए। वह बाल्य पनपता रहा। परन्तु वह अन्तरात्मा को तो जानता था और उसे ममता और मोह से पृथक रहना ही था। मेरे प्यारे! कुछ ऐसा स्मरण आता रहता है कि वह जब युवा, प्रबल होने लगा तो उसे न तो ममता माता से है, न पितरों से है और न मानो उस गृह और राष्ट्र से उसे ममता है। मेरे प्यारे! देखो राजा ने यह कहा कि यह बाल्य तो ऐसा प्रतीत होता है देवी! जैसा यह बाल्य निर्बुद्धि हो। उन्होंने कहा प्रभु, यह आपके समीप है।

मेरे पुत्रो! देखो, राजा ने जो मानो मस्तिष्क के विशेषज्ञ थे उनके द्वारा उनका प्रवेश कराया गया और उनका निदान होने लगा। जब निदान होने लगा तो देखो वे अपने में बड़े पूर्णत्व में हैं, अपने में मानो सुसज्जित हैं और स्वास्थ्यवर्धक अपनी क्रियाओं में रत्त हैं। विशेषज्ञों ने कहा राजन्! यह तो बाल्य बड़ा स्वस्थ है मानो इसका मस्तिष्क और हृदय बड़ा उज्ज्वल है। उन्होंने कहा प्रभु, इसे कोई रुग्ण नहीं है।

महात्मा जड़भरत का भयँकर वन में गमन

मुनिवरो! देखो, वह बाल्य जब गृह में आ गया तो उसे मोह ममता नहीं थी और जिसे ममता नहीं होती, मोह नहीं होता वह मानो **विवेकी पुरुष** कहलाता है। और जब विवेकी हो जाता है तो आत्मा में ही अपने में

लीन होना चाहता है। मेरे पुत्रो! वह बाल्य आत्मतत्व में रमण कर गया था। वह आत्मतत्व में जब रमण कर रहा था तो मानो 'विप्रहे' उसे राजा ने जब अपनी वाटिका में प्रवेश कराया तो वाटिका को वह बालक नष्ट करने लगा। जब नष्ट करने लगा तो वाटिका के जो विशेषज्ञ थे वह राजा के समक्ष आये और राजा से कहा हे प्रभु, आपका जो यह बाल्य है उसने सर्वत्र वाटिका का विनाश कर दिया है। प्रभु, अब क्या किया जाये? राजा स्वतः उस वाटिका में पहुँचे और वाटिका में जाने के पश्चात् उन्होंने दृष्टिपात किया अरे! सब वाटिका का विनाश हो गया। तो राजा ने कहा, हे बाल्य! तुम मेरे राष्ट्र से दूरी हो जाओ, तेरा इस राष्ट्र में रहने का कोई अधिकार नहीं है। ऐसा कहा जाता है कि जब उसे धिक्कारा तो देखो, 'बाल्य ब्रह्मणे कृत' उन्होंने उस वाटिका को त्याग दिया और भयँकर बन में चले गये। क्योंकि न तो राजा को मोह रहा है और न देवी को मोह रहा है और न उस बाल्य को मोह रहा है, न नगरी वालों को मोह रहा है। बेटा! जब निर्मोही हो गया तो उसने राष्ट्र को त्याग दिया और भयँकर वन में चले गये।

मेरे प्यारे! देखो, **आत्मवेत्ता तो आत्मा में लीन रहते हैं,** आत्म चिन्तन करते रहते हैं। पुष्प पत्र पान कर लेना और पान कर लेने के पश्चात् **'ब्रह्मण ब्रवाह कृतं देवः हिरण्यं रथं ब्रह्म कृतो देवत्वां'** मेरे प्यारे! वेद की एक आख्यायिका यह कहती है जो मानो भयँकर वनों मे, आत्मा में लीन हो रहा है, आत्म चिन्तन कर रहा है, वह संसार की गणना में नहीं जी रहा है। वह विवेक और विडम्बना वृत्तियों में नष्ट हो गया है जिसका देखो यह संसार नहीं वही तो आध्यात्मिकवेत्ता कहलाता है, आत्म चिन्तन करता है और वह तो भयँकर वन में है।

महाराजा नियूष का तपस्या के लिए राष्ट्र का त्याग

मेरे प्यारे! देखो, हमारे यहाँ मनु वंश में जो अयोध्या में राज करते थे, महाराजा नियूष, वह अपने चौथे-पन का वृत्तियों में सर्वसम्पन्नता को प्राप्त हो गए। उन्होंने अपना ब्रह्मचर्य काल तो विद्यालय में व्यतीत किया और

गृहाश्रम मानो राष्ट्रीय प्रणाली को नियुक्त करने में, उसे सुसज्जित बनाने में रहे। वे राष्ट्र का पालन करने लगे, वह राजकीय कार्यों से जब उपराम हुए तो उनका वह दूसरापन भी समाप्त हो गया, तीसरेपन में प्रवेश हो गए। वे तीसरेपन में जब आये तो उनका जो पुत्र था, **बहु-सन्तु** राजा, वह उन्हें अपना राज दे करके महाराजा नियूष ने कहा हे गोधृत! मैं अब भयँकर वन में जा रहा हूँ। मैंने यह श्रवण किया है कि महाराजा जड़भरत एक आत्मवेत्ता हो गए हैं, मैं उनको, कहीं अपनी आत्म को अपने मनो से दूर, निश्चित करके मैं भी तपस्या करने जा रहा हूँ, आत्मा में लीन रहना चाहता हूँ। राजा के पुत्र ने कहा प्रभु! जैसी आपकी इच्छा क्योंकि हमारी जब राष्ट्रीय प्रणाली इस प्रकार की नियमावली नियुक्त करती है तो भगवन् आप जाइये।

मेरे प्यारे! देखो, महाराजा नियूष चार कहारों की पालिका में विद्यमान हो करके वहाँ से गमन करते हैं और भ्रमण करते हुए देखो, नाना ऋषि-मुनियों का मिलन हुआ, नाना जिज्ञासुओं का मिलन हुआ परन्तु वह किसी भी आभा में यह स्वीकार नहीं कर सके कि ये मेरे आध्यात्मिकवादी हैं और अध्यात्मवाद का मुझे उपदेश दे सकते हैं या मुझे ये साधक बना करके यौगिकता में परणित कर सकते हैं।

महात्मा जड़भरत से महाराज नियूष का मिलन

महाराजा नियूष भ्रमण करते हुये मुनिवरो! जब भयँकर वन में पहुँचे तो एक कहार पालिका का रुग्ण हो गया। जब रुग्ण हो गया तो 'महाराजा नव्ब्रहे' उन सेवकों ने महात्मा जड़भरत जो वहाँ जड़वत की भाँति मानो एक स्थली पर विद्यमान थे उन कहारों ने उन्हें लाकर के उस पालिका में जब नियुक्त कर दिया तो वह (जड़भरत) जानते नहीं थे कि यह पालिका कैसे चलती है, कैसे इससे गमन किया जाता है। वह कहीं ध्रुवा हो जाये कहीं ऊर्ध्वा हो जाये। तो देखो, 'अमृत' राजा बड़े दुःखित हुए। राजा को क्रोध ाग्नि जागरूक हो गई और उसने कहारों से कहा कि मेरी पालिका को स्थिर करो। उनकी वह पालिका जब स्थिर हो गई उन्होंने डण्डे से महाराजा भरत

को दण्डित करना प्रारम्भ किया। जब वे दण्डित करते रहे, करने के पश्चात् जब वे थकित हो गए। महाराजा नियूष अपने आसन पर विद्यमान हो गए।

महाराजा जड़भरत प्रभु से प्रार्थना करने लगा और वेद मन्त्रों के उद्गीत गाने लगा **'सम्भवे ब्रह्मणः स्वरस्तं सारस्वतं ब्रहे कृतं देवत्वां वायुः सम्भवे ब्रह्मणाः'** हे प्रभु! हे देव! हे देवों के महादेव! हे विष्णु! तू पालन करने वाला है, हे भगवन्! तुम न्यायकर्ता हो, आप न्यायकारी हैं, हे भगवन्! मैंने तो पूर्व ले जन्म में हिरणी के बाल्य से मोह किया था भगवन् और मैं मोह के कारण कहाँ से कहा चला गया। हे प्रभु! जब मुझे मोह आया तो पिता ने मुझे धिक्कारा, ऋषि-मुनियों ने बहुत धिक्कारा परन्तु मेरा मोह ज्यों का त्यों बना रहा। शरीर को त्याग दिया। उस मोह के कारण माता के गर्भ में रहना हुआ। माता के गर्भ से पृथक हो गया तो राजा ने मुझे अपने राष्ट्र से दूरी कर दिया कि मेरे राष्ट्र में तुझे रहना नहीं है। मैं भयँकर वन में चला आया। प्रभु! हे भगवन्! यहाँ ऐसे-ऐसे राजाओं ने मुझे दण्डित किया है, हे प्रभु मैंने तो मोह ही किया था, जो मुझे इतना दण्डित किया है परन्तु ये जो मोह भी करते हैं, हे प्रभु मैंने तो मोह ही किया था, जो मुझे इतना दण्डित किया है। क्रोध भी करते हैं, 'कामा' देखो काम वृत्तियों में भी रत्त रहते हैं, हे प्रभु! जब ये तेरे द्वार पर जायेंगे तेरे न्यायालय में तो प्रभु! आप कैसा न्याय करोगे? हे प्रभु! आप किस प्रकार उनकी कर्म गतियों के न्याय में परणित हो जाओगे? मोह के कारण ही जब मैं इस संसार में इतना दुःखित हो गया हूँ, हे प्रभु! जो क्रोधी भी हैं और कामी भी रहे हैं, शासन कर्ता भी हैं उनकी क्या गति होगी?

मेरे प्यारे! महाराजा नियूष ने कहा, हे प्रभु! आप कौन हैं? आप इस प्रकार क्यों मगन हुए हो मेरे दण्डित करने से? उस समय भरत ने कहा हे राजन् मैंने पूर्वले जन्म में मोह किया था तो मेरी यह दशा हो गई और मैं प्रभु से यह प्रार्थना कर रहा हूँ कि ऐसे प्राणियों का क्या बनेगा जो क्रोधी भी हैं, कामी भी हैं और जो मोह भी करने वाले हैं, सब प्रकार के परपञ्चों में

जो रत्त रहने वाले हैं प्रभु! उनको न्यायालय में आप क्या न्याय दोगे? मैं यह प्रार्थना कर रहा हूँ। महात्मा भरत की वार्त्ताओं को श्रवण करने के पश्चात् महाराजा नियूष ने कहा कि प्रभु आप कौन हैं? उन्होंने कहा मेरा नाम भरत है। उन्होंने कहा कि क्या आप वही जड़भरत हैं जिसका नामोकरण वायुमण्डल में क्या सर्वत्र पृथ्वी मण्डल पर हो रहा है। आप तो धन्य हैं प्रभु, मैं तो आपको मानो अपना स्वामी बनाने के लिए और गुरू बनाने के लिए, आत्मवेत्ता के लिए मैं प्रार्थना कर रहा था और मैं हे भगवन्! इसीलिए आया हूँ। हे प्रभु! मुझे क्षमा करो और मुझे आप अपनी शरण में ले लीजिये। आप मुझे ज्ञान और विज्ञान की प्रतिभा वर्णन कराइये। हे प्रभु! मेरा उद्धार जभी हो सकेगा और मैंने यह महापाप किया है जो आपको दण्डित किया, अपनी स्वार्थपरता के कारण। हे प्रभु! अब आप ब्रह्म हैं मुझे क्षमा कीजिए।

महात्मा भरत बोले हे राजन्! आपका इसमें कोई दोषारोपण नहीं है। यह तो मेरे भोगों की पराकाष्ठा कहलाती है जो मैंने कर्म किया वह तो भोगना ही है। मेरे अन्तःकरण में नाना जन्म-जन्मान्तरों के जो संस्कार उद्बुद्ध हो रहे हैं, नाना संस्कारों को ले करके जो मैं गमन कर रहा हूँ मानो वे तो मेरे समीप आने ही हैं। उन्होंने कहा राजन् आप आध्यात्मिकवेत्ता हैं किसी आचार्य और महापुरुष की यदि आपको पिपासा बनी हुई है तो आप जाइये किसी को आचार्य बनाइए और उनके चरणों की वन्दना कीजिए। मैं इस योग्य नहीं हूँ राजन्।

महाराजा नियूष की प्रार्थना व महात्मा जड़भरत के वचनामृतों की वर्षा

मेरे प्यारे! देखो, महाराजा नियूष ने कहा प्रभु! आप ही तो मेरे सहयोगी हैं क्योंकि मैंने तो संकल्पबद्ध हो करके ही अपने राज्य को त्यागा है और मैं आपकी शरण में आया हूँ। प्रभु, मुझे आप अपने से दूरी न कीजिए। हे प्रभु! 'मंगल ब्रह्मे' जैसे यह प्रकृति परमात्मा से दूरी नहीं होती है, यह नाना प्रकार की आभा में रत्त रहती है, जिस प्रकार माता का पुत्र माता से दूरी नहीं होता है, जब तक वह जीता रहता है वह इस संसार में रहता है

उसका नामोकरण बना रहता है और प्रणालियाँ भी इसी प्रकार बनी रहती हैं। हे प्रभु! आप मुझे क्षमा कीजिए। मेरे प्यारे! महाराजा भरत ने कहा, मैं कौन हूँ स्वीकार करने वाला, क्योंकि **परमपिता परमात्मा अनन्तमयी हैं और वह अनन्तवान् हैं** मानो मैं उसको प्रार्थना करता रहता हूँ। और इसके पूर्वले काल में मेरा जीवन मोक्ष के निकट चला गया था और मैं मोह के कारण यहाँ आ गया हूँ। प्रभु, आप मेरे इस योग्य नहीं हैं और मैं आपके सुयोग्य नहीं हूँ। क्योंकि आप तो राज्य को त्याग करके आये हैं, किसी राजर्षि के द्वार पर जाओ और राजर्षि से जा करके यह प्रश्न करो कि मैं आत्मवेत्ता बनना चाहता हूँ। हे प्रभु! मेरे में इतनी क्षमता नहीं है। क्योंकि मैं तो अपनी अन्तरात्मा को निहारता रहता हूँ और मेरे हृदय की यह पिपासा बनी हुई है कि अब मैं वहीं मोक्ष के द्वार पर चला जाऊँ जहाँ से मैं इस संसार में आ गया हूँ। मेरी अभिलाषा यही बनी रहती है प्रभु! क्योंकि प्रभु का जो ज्ञान विज्ञान है वह अनन्तमयी माना गया है। यहाँ प्रभु के राष्ट्र में नाना प्रकार के विचारक होते हैं। कोई मानो अध्यात्मिकवेत्ता आत्मा के ऊपर विश्लेषण कर रहा है, कोई देखो राष्ट्र के ऊपर विश्लेषण कर रहा है, कोई मानो पृथ्वी-विज्ञान में रत्त रहना चाहता है, कोई शब्द विज्ञान को जानना चाहता है, मानो कोई अपने में क्रियात्मक जीवन बनाकर के प्रभु के समीप जाना चाहता है। तो हे राजन्! आप तो किसी और महापुरुष को लीजिए जो तुम्हारी पिपासा को पूर्ण कर सके क्योंकि, मैं तो स्वतः पिपासी बन गया हूँ। तो मैं तो पिपासी हूँ और जो आपकी पिपासा को शान्त कर दे, तुम वहाँ चले जाओ। हे प्रभु। देखो, **नाना प्रकार के ज्ञान और विज्ञान में रत्त रहने वाले ही महापुरुष कहलाते हैं।** हे राजन्! 'अम्ब्रहे कृतं' तुम वहाँ चले जाओ जहाँ अन्तरिक्ष की उड़ान उड़ने वाले ऋषि-मुनि होते हैं। जहाँ मानो अग्नि की धाराओं और ऊर्जा पर विद्यमान होकर के द्यौ को प्राप्त कर लेते हैं, तुम उस स्थली में गमन कर जाओ। मेरे प्यारे! देखो, महात्मा जड़भरत ने कहा कि मैं तो जड़ हूँ और भरत मानो मुझे यह समाज कहने लगा है। मैं तो जड़वत हूँ और जड़ के द्वारा मानो चेतना का वाहन

नहीं बन पायेगा। प्रभु! मैं तो जड़वत हूँ और मैं जड़वत ही बनना चाहता हूँ। मैं इस संसार की दृष्टि में ज्ञान और विज्ञानवेत्ता नहीं बनना चाहता हूँ।

मेरे प्यारे देखो, महाराजा नियूष बोले कि हे प्रभु! मैंने ज्ञान और विज्ञान की बहुत सी उड़ानें उड़ी हैं। क्योंकि हमारे यहाँ मैं राष्ट्रवेत्ता भी रहा हूँ और राष्ट्रवेत्ता के यहाँ नाना प्रकार का विज्ञान होता है और उस विज्ञान में मानो मैं भी रमण करता रहा हूँ। विज्ञान, हमारे यहाँ नाना प्रकार के लोक-लोकान्तरों वाला रहा है। विज्ञान मानो एक-एक शब्द के ऊपर यह सर्वत्र सृष्टि का चक्र चल रहा है। इस प्रकार का विज्ञान हमारे यहाँ है। हे प्रभु! उस विज्ञान को आप त्यागिए मुझे तो अपने आध्यात्मिकवाद और उस प्रकाश में ले जाइये जिस प्रकाश के लिए आप भी पिपासु बने हुए हैं और वह जो पिपासा है, हे भगवन्! मेरी भी पिपासा आप शान्त कीजिए।

मेरे पुत्रो! देखो, महाराज नियूष के ये शब्द श्रवण करते हुए महात्मा जड़भरत ने कहा हे राजन्! मैं इस योग्य नहीं हूँ मानो मैं तो अपने प्रभु में ही रत्त रहना चाहता हूँ। मैं संसार में शिक्षा नहीं दे सकता। मैं संसार को नहीं जानना चाहता हूँ। मैं संसार को अपने अन्तःकरण में समेटना चाहता हूँ, मैं इसको विस्तृत करना नहीं चाहता हूँ। मुनिवरो! देखो, महाराजा नियूष ने कहा हे प्रभु! आपका जो ज्ञान-विज्ञान है वह भी मुझे नहीं चाहिए। भगवन्, मुझे तो आध्यात्मिक जो ये गतियाँ हो रही हैं जिससे आत्मा के समीप चला जाऊँ मैं आत्मा के ही ज्ञान और विज्ञान में रत्त रहना चाहता हूँ। क्योंकि, आत्मा प्रकाशक है, आत्मा के न रहने पर ही यह शरीर शून्य गति को प्राप्त हो जाता है। प्रभु मुझे वह शून्यता नहीं चाहिये। प्रभु, मैं यह चाहता हूँ कि मेरी चेतना सदैव बनी रहे और उस चेतना को ही मैं जानना चाहता हूँ।

मेरे प्यारे! देखो, उस समय महात्मा भरत ने कहा हे राजन्! जब आत्मा स्वतः चेतना है और वह तुम्हारे अन्तःकरण में विद्यमान है, फिर चेतना का तुम भान क्यों करते हो? चेतना में क्यों रहना चाहते हो क्योंकि स्वतः तुम

चेतन्य हो। उन्होंने कहा प्रभु, वह जो आवरण आ गया है, उसी आवरण को तो मैं नष्ट करना चाहता हूँ। जैसे आपका आवरण नष्ट हो गया है। मेरे मानो जन्म-जन्मान्तरों के संस्कारों और मेरे राष्ट्र की क्रियाकलापों से मेरे अन्तःकरण में नाना प्रकार का आवरण आ गया है उस आवरण को नष्ट कराना चाहता हूँ। आवरण को ही दूरी कराना चाहता हूँ जिससे मेरा स्पष्टीकरण मानो प्रकाश में मेरा अन्तर्हृदय चला जाये, मैं ऐसा चाहता हूँ।

मेरे प्यारे! देखो, महात्मा भरत ने कहा हे राजन्! हे नियूषम्ब्रहे कृतम् देखो वह आवरण तो तुम्हारी वृत्तियों के कारण है और वह आवरण, जब तुम परमात्मा के राष्ट्र में चिन्तन करोगे और इस संसार में, प्रकृतिवाद में परणित न होगे, तो मानो तुम्हारे अन्तःकरण का जो प्रकाश है, तुम्हारी जो मानवीयता है वह तुम्हारे में ही स्पष्टीकरणता को धारण करने लगेगी। देखो, उन्होंने कहा यह मैं जानता हूँ, आपने ही मुझे निर्णय कराया है परन्तु 'आप ब्रह्म' मेरी अन्तरात्मा यह कहती है कि आप मुझे भगवन् ऐसा वृत्तद् उत्पन्न कीजिए जिससे मेरा वृत महान् बन करके आपके चरणों की वन्दना करता रहे और मैं इस सागर से पार होने के लिए प्रयास करता रहूँ।

मेरे पुत्रो! देखो, जब उन्होंने यह कहा तो महात्मा भरत तो मौन हो गए और राजा वहीं विद्यमान हो गए। मुझे कुछ ऐसा स्मरण आ रहा है कि बारह वर्ष हो गए महाराज नियूष भी विद्यमान हैं और महात्मा जड़भरत भी और जब मौन धारण कर लिया तो वे कोई वार्त्ता एक दूसरे में प्रकट नहीं कर रहे थे। वे दोनों ही प्रभु की सृष्टि को निहारने लगे।

महात्मा जड़भरत द्वारा उपासना का उद्गीत

महात्मा जड़भरत अब हृदय में उद्गीत गाने लगे कि हे प्रभु! मैं अपनी इस स्थली से उपराम होना चाहता हूँ, मुझे वह मोक्ष कब प्राप्त होगा। मैं इस संसार को दृष्टिपात करना ही नहीं चाहता, मैं तो आप को इस संसार में ही दृष्टिपात करता रहता हूँ, निहारता रहता हूँ। हे प्रभु! अब मेरी इच्छा बन गई कि मैं अब आपके समीप जाना चाहता हूँ। हे प्रभु! मैंने ममता को अब

त्याग दिया है और मेरा वह संकल्प समाप्त हो गया है। मेरा वह संकल्प मानो महानता को प्राप्त हो गया है। 'ब्रह्मे आपं लोकां आपं रुद्रो आपं ब्रहे कृतम्' हे प्रभु! मुझे आप ही आप दृष्टिपात आते हैं। रुद्र भी आप हैं मानो चेतना में रत्त रहने वाले हैं। हे प्रभु! आप तो महान् चेतनित हैं, मुझे भी चेतना के क्षेत्र में ले जाइए जहाँ मैं चेतना से जड़वत् को प्राप्त हो गया था। मैं अब जड़वत् नहीं रहना चाहता, मैं चेतना में रत्त रहना चाहता हूँ। हे प्रभु! आपका एक-एक परमाणु गमन कर रहा है। एक-एक लोक-लोकान्तर मानो आपके सूत्र में पिरोया हुआ है प्रभु! और यह जो लोक-लोकान्तरों की एक माला बनी हुई है, हे प्रभु! मुझे भी माला बना करके अपने में धारण कर लो। हे प्रभु! मैं मानो माला का एक मनका बनना चाहता हूँ, जैसे आपने सूर्य को एक मनका बनाया है, एक मनका चन्द्रमा है, एक बृहस्पति मनका है, एक मानो आरूणि मण्डल मनका है, ऐसा ही एक ध्रुव मनका है और इसकी माला बन करके मानो ये मनके आप सूत्र रूपी आप में पिरोये हुए हैं। आप ही तो उनके सूत्र बने हुए हैं। ये तो केवल मनके हैं और मनके ही आप में पिरोये जाते हैं तो उस माला को आप ही तो धारण कर रहे हैं, इन्हें धारयामी बनाये हुये हो। हे प्रभु! मैं भी आपकी माला का एक मनका बनना चाहता हूँ।

मेरे प्यारे! देखो, महाराजा जड़भरत इस प्रकार अपनी उपासना करते हुए देखो, नेत्रों में अश्रुपात हो रहे हैं। वाणी मानो अपनी स्थलियों में वाणी नहीं रही, घ्राण इन्द्रिय अपने में सुगन्ध से वञ्चित होने लगी हैं। नेत्र दृष्टि से वञ्चित होने लगे हैं। देखो हृदय में हृदय को समेटना चाहता हूँ। यही आध्यात्मिक और उपासना का एक मूल कहलाता है जिसके ऊपर बेटा! ऋषि मुनि परम्परागतों से अन्वेषण करते रहते हैं, अनुसन्धान करते रहते हैं। उस अनुसन्धान की बेला में यह ब्रह्माण्ड उनके लिए खिलवाड़ है और ये ज्ञान और विज्ञान को त्याग करके आध्यात्मिकवाद में आध्यात्मिकवेत्ता बन करके अपने में रत्त हो रहे हैं। तो आओ, मेरे प्यारे! मैं तुम्हें विशेष विवेचना देने नहीं आया हूँ। विचार केवल यह कि वे परमपिता परमात्मा अनन्तवान्

हैं और उनका ब्रह्माण्ड भी अनन्तवान् में देखो, सर्वत्र यह ब्रह्माण्ड पिरोया हुआ है और यह ब्रह्माण्ड को साधना करने वाला, प्राण और अपान में रत्त हो करके, उसको अपने में दृष्टिपात कर लेता है।

आओ, मेरे प्यारे! आज का विचार क्या कह रहा है? आज बेटा! मैं बहुत दूरी चला गया हूँ अपने विचार देते हुए। मेरे प्यारे! जैसे ही उनका अनुष्ठान समाप्त हुआ, उसी अनुष्ठान की उपासना को और उसके पश्चात् जो उनके उद्‌गार थे उनको श्रवण करते हुए महाराजा नियूष उनके चरणों में आलिङ्गन हो गए और वे चरणों की वन्दना करने लगे। महात्मा भरत जी मौन हैं, राजा भी मौन हैं। देखो प्रभु में प्रभु की उपासना करते हुए महाराजा नियूष और वे जड़भरत दोनों एक दूसरे में प्रभु के उपासक बने गए।

अनुष्ठान में रत्त रहने की प्रेरणा

यह विचार क्या रहा है? विचार यह कह रहा है कि मानव आध्यात्मिकवेत्ता बनने के लिए नाना प्रकार के अनुष्ठान करता रहता है और उसे अनुष्ठान करने चाहिए। **अनुष्ठान उन्हें कहते हैं जो मानो अपने में कटिबद्ध हो जाता है जैसे वृष्टि होती है** और वह वृष्टि भी मानो अपनी एक स्थली पर विद्यमान है और वृष्टि में ही वह अपने को कटिबद्ध कर लेता है। इसी प्रकार जो मानव प्रभु की साधना में इतना रत्त हो जाता हो, हो जाता है कि अङ्ग-सङ्ग में मानो उसी को दृष्टिपात करता है। प्राणों में, अपान में, व्यान में, समान में, उदान में वही रत्त रहने वाला है। उसके ये भिन्न-भिन्न प्रकार के स्वरूप उसे दृष्टिपात आते हैं और उन्हीं को एक, एकता में अनेकता और एकता को अपने में धारण करता रहा है। वही बेटा! व्यष्टि और समष्टि में प्रवेश कर जाता है और **व्यष्टि को समष्टि में ले जाना ही बेटा! ब्रह्माण्ड है और समष्टि को व्यष्टि में ले जाना ही संसार है,** वही मोह है, वही देखो क्रोधाग्नि जागरूक होती रहती है। तो यह है बेटा! आज का वाक्।

आज के वाक्य उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि **हे मानव! तू संसार में मोह-ममता में इतना रत्त न हो जिससे मोह-ममता मानो तेरे नाना जन्म-जन्मान्तरों के संस्कारों का मूल बनता रहे।** तू सदैव अपनी ममता में इतना रत्त न हो। हे मानव, तू अपनी आत्मा से ही ममता को ध ाारण कर, आत्मा को ही आत्मतत्व में रमण कराने वाला बन जिससे तेरा आत्मोद्धार हो जाये। तो यह है आज का वाक्। आज के वाक्य उच्चारण करने का अभिप्राय क्या कि जड़भरत और महाराजा नियूष की आत्म चर्चायें होती रहतीं, आत्मा में वे सदैव लीन रहने का प्रयास करते। वे अब पुनः से अपनी एक पहरी, दूसरी पहरी पर जाना उन्होंने प्रारम्भ किया, जैसे, ओ३म्, भुवः, स्वः, महः, जनः, तपः, सत्यम्—ये सात प्रतियाँ कहलाती हैं और इन्हीं सात प्रतियों के उपरान्त प्रभु का अन्वन्ती दर्शन हो जाता है। विचार आता रहता है कि वह मोक्ष के निकट जाना प्रारम्भ कर देता है और अपने में ही अपनेपन को वह रत्त हो जाता है। आज का विचार क्या? हम अपने में महान् बनने के लिए मानो अपने में, ममता में क्रोधाग्नि में न परणित हो जाये और हम मोह में इतने घनिष्ठ न चले जाये जिससे वे हमारी मृत्यु व अज्ञान का कारण बन जाये। इसलिए हे मानव तू ज्ञानी है, परमात्मा ज्ञानियों का भी ज्ञानी है। क्योंकि परमात्मा ज्ञानी है तो तुम्हें भी ज्ञानी बनना चाहिए। परमात्मा विज्ञानवेत्ता है, तुम भी विज्ञानवेत्ता बनो। परमात्मा अकाय है मानो एक चेतना है, तुम भी चेतना में रत्त हो जाओ। बेटा! प्रभु अभिमानी नहीं हैं, मानव को भी निरभिमानी बन करके रमण करना चाहिए। परमात्मा मोह नहीं करता, इसलिए परमात्मा के समीप जाना है तो मोह को तुम्हें त्यागना होगा। परमात्मा को कभी क्रोध नहीं आता, इसलिए मानव तुम्हें भी क्रोधाग्नि को त्यागना होगा। यदि मानव तुम्हें प्रभु के निकट जाना है तो क्रोधाग्नि को और अभिमान को त्याग करके जाना होगा। वह प्रभु निरिच्छा है मानव को इच्छा में नहीं रहना चाहिए। हे मानव तुम्हें निरिच्छित हो करके परमात्मा के राष्ट्र में गमन करना है। यह है बेटा! आज का वाक्। अब मुझे समय मिलेगा, मैं शेष चर्चाएँ कल प्रकट कर सकूँगा।

आज के वाक्य उच्चारण करने का हमारा अभिप्राय यह कि वह परमात्मा अनन्तवान् हैं और उसका क्रियाकलाप भी अनन्तवान् है। हे मानव! तू इस पर विचार विनिमय कर। आज का वाक्य समाप्त, अब वेदों का पठन-पाठन होगा।

वेद पाठ.....

महर्षि महानन्द जी — अच्छा भगवन्!
पूज्यपाद-गुरुदेव — आनन्दित रहो!

दिनाँक : 13 अप्रैल, 1990
समय : रात्रि 8.00 बजे
स्थान : श्री अजय शर्मा
एल.आई.सी. कालोनी,
शाहदरा, दिल्ली

सदस्यता

पूज्यपाद ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज की ज्ञान गङ्गा का मासिक पत्रिका ''यौगिक प्रवचन'' में, वैदिक अनुसन्धान समिति द्वारा प्रकाशन किया जाता है और जिस के आजीवन सदस्य बनने के लिए शुल्क 1500 रु. और वार्षिक सदस्य बनने के लिए शुल्क 150 रु. है जिसको आप समिति के पते के साथ-साथ निम्न किसी एक पते पर भी डाक द्वारा भेजकर सदस्य बन सकते हैं–

1. डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश, प्रकाशन मन्त्री
   डी-33, पञ्चशील एन्क्लेव, नई दिल्ली-110017, फोन : 011-41030481
2. सुश्री नीरू अबरोल, कोषाध्यक्ष
   K-3, लाजपत नगर,-III, नई दिल्ली-110024 मोबाइल : 9810887207
3. श्री जितेन्द्र चौधरी, प्रचार मन्त्री
   ए-84, मालवीय नगर, नई दिल्ली-110017, मोबाइल : 9811707343

॥ ओ३म् ॥

ऋषियों के उद्‌गार

1. वेद नाम अन्तःकरण को पवित्र बनाने वाला है।
2. वेदरूपी प्रकाश हमें चेतना देता है। वह हमें अग्रणीय बनाता चला जाता है।
3. शतपथ ब्राह्मण जो सत का पथिक होता है वही ब्राह्मण कहलाता है।
4. वृष नाम मन का है।
5. दैत्य क्या है? काम, क्रोध, मद, लोभ इत्यादि हैं।
6. ध्वनि हमारे यहाँ धर्म को कहा गया है।
7. रेणुका नाम बुद्धि को कहा गया है।
8. अग्नि नाम प्रतिभा का है, अग्नि नाम चक्षुओं का कहा गया है।
9. हमारा जो मानव शरीर है यह एक प्रकार की सुन्दर यज्ञशाला है।
10. यज्ञ के दस पात्र–पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ मानी गयी हैं।
11. मानव के जीवन में वास्तविक सुगन्धि उसके विचारों में होनी चाहिए।
12. धर्म उसे कहते हैं जिस कार्य को करते हुए स्वयँ अपने लिए कष्ट हो वह कार्य दूसरों के लिए न करें।
13. तपस्या बिना मानव, यह समाज और यह संसार शून्य रहता है।
14. वसुन्धरा महामना प्रभु को भी कहा है जिसके गर्भ में यह सर्वस्व जगत विराजमान हो रहा है।
15. कर्त्तव्यवाद को ही कहीं-कहीं धर्म कहा है।
16. सर्वस्व जगत तप से ऊँचा बना है।
17. तप मानव का विचार है, मानव का आहार और व्यवहार है।
18. इन्द्रियों को तपाना है ज्ञान से, विवेक से, मानो इसमें विडम्बना नहीं होनी चाहिए।
19. इस तपने का नाम ऋत् कहलाया जाता है।

।। ओ३म् ।।

। कृण्वन्तो विश्वमार्यम् ।

पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज

राष्ट्र कल्याणार्थ अष्ठम् चतुर्वेद ब्रह्म पारायण महायज्ञ

दिनांक 7 नवम्बर 2021 रविवार से 14 नवम्बर 2021 रविवार तक

यज्ञस्थलीः देवभूमि, मौहल्ला तिहाई, ग्राम खरखौदा, (मुण्डा महादेव मन्दिर के पास) मेरठ

–: निमन्त्रण पत्र :–

प्रिय आत्मीय स्वजनों,

परमपिता परमात्मा की असीम अनुकम्पा से एवम् आदि गुरु पूज्य ब्रह्मा जी महाराज के परमप्रिय व ज्येष्ठ शिष्य पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज (त्रेताकालीन शृङ्गी ऋषि जी महाराज) की पावमानी प्रेरणा एवम् शुभ आशीर्वाद से महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि जी महाराज (याग प्रचार समिति) ग्राम खरखौदा के तत्त्वावधान में **(राष्ट्र कल्याणार्थ अष्ठम् चतुर्वेद ब्रह्म पारायण महायज्ञ)** वैदिक परम्परा के अनुसार आदि ऋषियों द्वारा निर्धारित कर्मकाण्ड पद्धति द्वारा सम्पन्न होगा। जिसको इस कलयुग में पुनः से पूज्यपाद गुरुदेव ने जागृत किया और अपनी ये दिव्य ज्योति अपने शिष्यों को इस विश्व में प्रकाशमान बनाए रखने के लिए प्रेरित किया। उसी मर्यादा को सम्पन्न एवम् ऊर्ध्वागति प्रदान करते हुए प्राणी मात्र के जीवन की जीवन सत्ता को सम्पन्न बनाने के लिए इस महायज्ञ का आयोजन देवभूमि, मौहल्ला तिहाई, ग्राम खरखौदा में आप सबके सहयोग से अत्यन्त श्रद्धा व हर्षोल्लास से पाँच यज्ञ वेदियों पर सम्पन्न होगा। अतः आपसे नम्र निवेदन है कि इस महायज्ञ में प्रातः व साँय समयानुसार अपने परिवार, सम्बन्धी व ईष्ट मित्रों सहित उपस्थित होकर तन, मन, धन से आहुति प्रदान करते हुए अपने जीवन के मार्ग को प्रशस्त करें।

यज्ञ के ब्रह्मा – आचार्य श्री गुरुवचन शास्त्री जी, लाक्षागृह, बरनावा।

आचार्य एवम् वेदपाठी – श्री महानन्द संस्कृत महाविद्यालय लाक्षागृह, बरनावा एवम् गुरूकुल गौतम नगर नई दिल्ली।

–: कार्यक्रम :–

दिनांक 7 नवम्बर 2021 रविवार से 13 नवम्बर 2021 रविवार तक

प्रातः 7:15 बजे ओ३म् ध्वजारोहण (प्रथम दिवस) एवम् ब्रह्मयज्ञ (सन्ध्या)

प्रातः 8:00 बजे से **11:15 बजे** तक यज्ञ व प्रवचन

सायंः 2:15 बजे से **5:15 बजे** तक यज्ञ व प्रवचन

दिनांक 14 नवम्बर 2021 प्रातः

प्रातः 8:00 बजे से **11:00 बजे** तक यज्ञ और महायज्ञ की पूर्णाहुति तत्पश्चात् प्रवचन एवम् आशीर्वाद, शान्ति पाठ व ब्रह्मभोज। **निवेदक समस्त खरखौदा निवासी**

योगनिष्ठ पूज्यपाद ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज (शृङ्गी ऋषि जी) की अमृतवाणी संहिता के रूप में

1.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 1)	110.00
*2.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 2)	110.00
*3.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 3)	120.00
*4.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 4)	120.00
5.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 5)	160.00
6.	Yogic Wisdom of Ancient Rishis	100.00
7.	वेद पारायण-यज्ञ का विधि विधान	40.00
8.	आत्म-लोक	45.00
*9.	धर्म का मर्म	50.00
10.	शंका-निवारण	40.00
11.	यज्ञ-प्रसाद अर्थात् यज्ञ का महत्त्व	50.00
12.	आत्मा व योग-साधना	40.00
*13.	देवपूजा	50.00
14.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 1)	150.00
15.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 2)	150.00
16.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 3)	140.00
17.	रामायण के रहस्य	50.00
18.	यज्ञ एवं औषधि विज्ञान	50.00
19.	महाभारत के रहस्य	35.00
20.	अलङ्कार-व्याख्या	45.00
21.	रावण-इतिहास	65.00
22.	महाराजा-रघु का याग	35.00
23.	वनस्पति से दीर्घ-आयु	40.00
24.	मोक्ष प्राप्ति का मार्ग	40.00
25.	चित्त की वृत्तियों का निरोध	50.00
26.	आत्मा, प्राण और योग	40.00
27.	पञ्च-महायज्ञ	45.00
28.	अश्वमेघ-याग और चन्द्रसूक्त	50.00
29.	याग-मन्जूषा	45.00
30.	आत्म-दर्शन	35.00
31.	पुत्रेष्टि-याग और मातृ-दर्शन	40.00
32.	याग और तपस्या	70.00
33.	यागमयी-साधना	45.00
34.	यागमयी-सृष्टि	40.00
35.	याग-चयन	50.00
36.	दिव्य-रामकथा	150.00
37.	ज्ञान-कर्म-उपासना	50.00
38.	दिव्य-ज्ञान	45.00
39.	महाभारत एक दिव्य दृष्टि	140.00
40.	महर्षि-विश्वामित्र का धनुर्याग	50.00
41.	आत्म-उत्थान	45.00
*42.	तप का महत्त्व	50.00
43.	अध्यात्मवाद	45.00
44.	ब्रह्मविज्ञान	45.00
45.	वैदिक-प्रभा	40.00
46.	प्रकाश की ओर	40.00
47.	कर्तव्य में राष्ट्र	45.00
48.	वैदिक-विज्ञान	40.00
49.	धर्म से जीवन	40.00
50.	आत्मा का भोजन	45.00
51.	साधना	40.00
52.	त्रेताकालीन-विज्ञान	45.00
53.	यज्ञोमयी-विष्णु	45.00
54.	यौगिक प्रवचन माला भाग-6	110.00
55.	स्वर्ग का मार्ग	50.00
*56.	यौगिक प्रवचन माला भाग-7	110.00
57.	माता मदालसा	60.00
*58.	यौगिक प्रवचन माला भाग-8	110.00
*59.	यौगिक प्रवचन माला भाग-9	110.00
60.	यौगिक प्रवचन माला भाग-10	110.00
61.	याग एक सर्वाङ्ग पूजा	110.00
62.	यौगिक प्रवचन माला भाग-11	150.00
*63.	यौगिक प्रवचन माला भाग-12	110.00
64.	मानव कल्याण की चर्चाएँ	60.00
65.	प्रभु-दर्शन	60.00
*66.	यौगिक प्रवचन माला भाग-13	110.00
*67.	समाज उत्थान का मार्ग	60.00
*68.	यौगिक प्रवचन माला भाग-14	110.00
*69.	ब्रह्म की ओर	60.00
*70.	ईश्वर मिलन	60.00
*71.	यौगिक प्रवचन माला भाग-15	110.00
*72.	यौगिक प्रवचन माला भाग-16	110.00
*73.	नैतिक शिक्षा	60.00
*74.	यौगिक प्रवचन माला भाग-17	110.00
*75.	आत्मिक ज्ञान	60.00
*76.	यौगिक प्रवचन माला भाग-18	120.00
*77.	यज्ञ विज्ञान	100.00
*78.	यौगिक प्रवचन माला भाग-19	120.00
79.	मानव दर्शन	150.00
80.	यौगिक प्रवचन माला भाग-20	160.00
	पूज्यपाद ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज एवम् कर्मभूमि लाक्षागृह	10.00

*सहजिल्द का मूल्य 20 रु. अतिरिक्त है।

॥ ओ३म् ॥

कार्यकारिणी का चयन

समिति की आम सभा की बैठक में दिनाँक 26 सितम्बर, 2021 को **आर्य समाज मन्दिर, मालवीय नगर, नई दिल्ली-110017** में सर्वसम्मति से निम्न कार्यकारिणी का गठन आगामी पाँच वर्षों के लिए किया गया–

1. प्रधान	–	श्री रवि प्रकाश गुप्ता
2. उप-प्रधान	–	श्री ब्रजगोपाल खोसला
3. कोषाध्यक्ष	–	सु. कु. नीरू अबरोल
4. प्रकाशन मन्त्री	–	श्री मधुसूदनेश्वर प्रकाश
5. मन्त्री	–	श्री सुशील त्यागी
6. उप-मन्त्री	–	श्री कपिल शर्मा
7. प्रचार मन्त्री	–	चौधरी जितेन्द्र चिकारा

कार्यकारिणी के सदस्य

1. श्री सूर्य देव
2. श्री लोमश त्यागी
3. श्री सिद्धार्थ गुप्ता
4. श्री कर्ण तुली
5. श्री संजीव त्यागी
6. रामनिवास त्यागी
7. चौधरी नरेन्द्र चिकारा

मन्त्री

वैदिक अनुसन्धान समिति (पंजी.)

मासिक सहयोग

सु. कुमारी नीरू अबरोल, के-3 लाजपत नगर-III नई दिल्ली–	
स्मृति–श्रीमति शान्ति अबरोल व श्री देवराज अबरोल	1001 रुपये
श्री संजीव त्यागी (दिनकरपुर) फरीदाबाद, हरियाणा	1000 रुपये
श्री ज्ञानेश द्विवेदी	1000 रुपये
श्री राकेश शर्मा, विराट नगर, पानीपत, हरियाणा	501 रुपये
श्री कर्ण तुली, के-3 लाजपत नगर-III, नई दिल्ली	501 रुपये
श्रीमती रुचिका तुली, के-3 लाजपत नगर-III, नई दिल्ली	501 रुपये
श्री अरुण त्यागी, राजनगर, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश	500 रुपये
श्री विनोद त्यागी सुपुत्र श्री जयप्रकाश त्यागी मकनपुर, गाजियाबाद	500 रुपये
श्री अरुण तुली, के-3 लाजपत नगर-III, नई दिल्ली	251 रुपये
श्रीमती सुखमणी तुली, के-3 लाजपत नगर-III, नई दिल्ली	251 रुपये
मा. कार्तिक त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	251 रुपये
मा. लोमश त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	251 रुपये
डॉ. शुचि, डॉ. राजीव चावला, आणद, गुजरात	250 रुपये
मास्टर कवन्धि त्यागी, रामप्रस्थ, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश	101 रुपये
मास्टर सिद्धार्थ त्यागी, अँकुर अपार्टमैन्ट, पटपड़ गंज, दिल्ली	101 रुपये
कुमारी अञ्जलि त्यागी, रामप्रस्थ, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश	101 रुपये
मास्टर सात्विक त्यागी, अँकुर अपार्टमैन्ट, पटपड़ गंज, दिल्ली	101 रुपये
मास्टर अभ्युदय त्यागी, न्यू जर्सी, अमेरिका	101 रुपये
कुमारी प्रीक्षा त्यागी, न्यू जर्सी, अमेरिका	101 रुपये
मास्टर कबीर, कुमारी रिधानी मल्हौत्रा, ब्रज विहार, गाजियाबाद	101 रुपये
कुमारी सृष्टा, मास्टर अव्युक्त, पश्चिम एन्कलेव, नई दिल्ली	101 रुपये

मासिक सहयोग का आह्वान

आप सभी से समिति विनम्र भाव से प्रार्थना करती है कि मासिक सहयोग की राशि समय पर प्रेषित करने का सहयोग करें जिससे प्रकाशन निरन्तर ऊर्ध्वागति को प्राप्त होता रहें। **वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)**

योगमुद्रा में प्रवचन करते हुए पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज

उद्‌बोधन

प्रभु! हम चाहते क्या हैं? हमारी कामना क्या है? हमारी एक ही तो कामना है कि हमारा हृदय स्वच्छ बन जाए। हमारे हृदय में श्रद्धा उत्पन्न हो जाए। हम सत्य को स्वीकार करने लगें। सत्य क्या है? सत्य वह कहलाता है जो प्रभु का दिग्दर्शन है, सत्य मानवीय दर्शन है। मानवीय दर्शन क्या है? अपने में ही अपनेपन का दर्शन करना, वह मानवीय दर्शन कहलाता है।

इसीलिए हे प्रभु! मैं श्रद्धा के क्षेत्र में जाना चाहता हूँ क्योंकि श्रद्धा हृदय में रहती है।

पूज्यपाद-गुरुदेव

वर्ष 50 : अंक : 582
अक्टूबर 2021

मूल्यः
पन्द्रह रुपये

RNI No. 23889/72
Delhi Postal R.No. DL (S)-20/3220/2021-2023
Licence to Post without prepayment
U (SE)-70/2018-2020
POSTED AT KRISHNA NAGAR HP.O. N.D. ON 10/11-10-2021
Published on 5th day of the same month

वर्ष 50 : अंक : 582
अक्टूबर 2021

मूल्यः
पन्द्रह रुपये

RNI No. 23889/72
Delhi Postal R.No. DL (S)-20/3220/2021-2023
Licence to Post without prepayment
U (SE)-70/2018-2020
POSTED AT KRISHNA NAGAR HP.O. N.D. ON 10/11-10-2021
Published on 5th day of the same month